अन्तिम सम्राट

ओंकारनाथ दिनकर
बी ए. ऑनर्स, विशारद

ओरिएण्टल बुक डिपो
नई सड़क, दिल्ली।

प्रकाशक—
ओरिएण्टल बुक डिपो
१७०४ नई सडक, दिल्ली।

मूल्य . दो रुपये, पचहत्तर नये पैसे

मुद्रक—
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस,
क्वींस रोड, दिल्ली

लेखक की अन्य रचनाएँ

- मुंजदेव
- भगवान बुद्धदेव
- विग्रहराज विशालदेव
- पवनञ्जय
- धारेश्वर भोज
- वाप्पादित्य कालभोज
- गुर्जरेश्वर
- प्रायश्चित्त
- महाभिनिष्क्रमण
- पत्थर में प्राण-प्रतिष्ठा
- दक्षयज्ञ
- अमर सेनानी
- शान्ति-दूत

दर्शन

सपादलक्ष

वर्त्तमान नागौर-जोधपुर-क्षेत्र की राजधानी अहिच्छत्रपुर थी। उसके समीपवर्त्ती प्रदेश को सपादलक्ष कहा जाता था। राजपूताना-प्रदेश में चौहान-नरेश इसी भू-भाग पर शासन करते थे। इन शासकों को सपादलक्षीय नरेश या नृपति की संज्ञा दी जाती थी। उसके पश्चात् चौहानों ने अपनी राजधानी अहिच्छत्रपुर से शाकम्भरी (वर्त्तमान साम्भर) बनाई। शासक शाकम्भरीश्वर कहलाये। कालान्तर में अनेक छोटे-छोटे राज्यों को जीतकर इसी में मिलाया गया और राजधानी अजयमेरु बनाई। अजयमेरु की स्थापना सपादलक्ष के तीसरे चौहान-नृपति श्री अजयपाल ने विक्रम की सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही अर्थात् ईस्वी सन् ५५१ में की थी।[1] अजयपाल वासुदेव के पौत्र तथा सामन्तराज के पुत्र थे। ये अहिच्छत्रपुर से आकर शाकम्भरी में रहने लगे थे। इसी चौहान वंश-वल्लरी के छब्बीसवें शासक विग्रहराज विशालदेव (वीसलदेव) ने राज्य-विस्तार किया। उन्होंने दिल्ली (तत्कालीन ढिल्लिका), हरियानका (हरियाना), हासिका (हाँसी) आदि अनेक उत्तरीय प्रदेशों को मिला लिया था। कालान्तर में जोधपुर राज्य का उत्तरीय प्रदेश, जयपुर राज्य का शेखावाटी-से लेकर रग-थंभोर का दक्षिणी भाग, जिसमें कोटा राज्य का उत्तरीय प्रदेश सम्मिलित था, मेवाड़ के मांडल गढ़[2] (मांडलकग दुर्ग) से लेकर समस्त पूर्वी भाग[3], बूंदी राज्य का पश्चिमी प्रदेश, कृष्णगढ़ राज्य (वर्त्तमान किशनगढ़) और वर्त्तमान अजमेर का समस्त प्रदेश सपादलक्ष में सम्मिलित था।

---

(१) प्रबन्धकोश। (२) जयपुर के अन्तर्गत सम्वत् १२४४ का बीसलपुर ग्राम का शिलालेख। (३) पृथ्वीराज चौहान द्वितीय के समय का धौम ग्राम के रूठी रानी मन्दिर का शिलालेख; सं० १२२५।

अजयमेरु

अजयमेरु नगर एक उपत्यका में बसा हुआ है। यह नगर उत्तरीय भारत के मैदानों के सर्वोच्च पठार पर स्थित है। वर्षाकाल में पर्याप्त हरियाली छा जाने से दृश्यावली बड़ी मनोरम बन जाती है। इसे चारों ओर से ऊँची-ऊँची अरावली पर्वत-माला की शाखाएँ घेरे हुए हैं। विग्रहराज विशालदेव ने अजयमेरु में कितने ही निर्माण-कार्य करवाये और उसे सपादलक्ष की राजधानी बनाया।

कर्नल टॉड ने अजयमेरु को राजपूताने की कुञ्जी कहा है। बिशप आर० हैबर का कथन है कि साधारण परिवर्त्तन के पश्चात् अजयमेरु संसार का द्वितीय जिब्राल्टर बन सकता है। अजयमेरु दुर्ग (गढ़बीटली = तारागढ़) अरावली पर्वत-श्रेणियों के पूर्वोत्तर छोर पर एक इतिहास-प्रसिद्ध दुर्ग है। इसका निर्माण अजयपालदेव ने ही सातवीं शताब्दी में अजयमेरु नगर के साथ ही कराया था। महमूद गज़नवी के आक्रमण काल (१०२४) तक यह दुर्ग अजेय रहा जिसमें गजनवी को पराजय का सामना करना पड़ा था।

विक्रम की तेरहवीं शताब्दी के पूर्व में विग्रहराज विशालदेव ने अजयमेरु को राजधानी बनाकर विशालसर (बीसल्या) के मध्य, पर्वत-खण्ड पर, कई राज-प्रासाद बनवाये थे। दक्षिण में सूर्य-मन्दिर बनवाया था। इन्हीं प्रासादों में उनके आत्मज सोमेश्वरदेव रहा करते थे। सोमेश्वर ने अजयमेरु की कीर्ति विस्तृत की, गौगनक (गगवाना) में कई देवमन्दिर बनवाये।

दिल्ली (ढिल्लिका)

इन वैभवशाली नरेशों के समय में दिल्ली (ढिल्लिका) पर तोमरेश्वरों का शासन चल रहा था। विग्रहराज ने दिल्लीश्वर गंगपाल को अपना मांडलिक बनाया। सोमेश्वर के समय अनंगपालदेव शासन करते थे। उन्होंने अपनी एक पुत्री कमलादेवी का विवाह सोमेश्वर (विग्रहराज विशालदेव के पुत्र) के साथ कर दिया था। दूसरी पुत्री का विवाह कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द के साथ कर दिया था। सोमेश्वर के साथ विवाह हो जाने पर दोनों राजवंशों में मधुर सम्बन्ध हो गये थे। अनंगपाल ने अपनी वृद्धावस्था के कारण योग्य उत्तराधिकारी चुनने का संकल्प किया। उत्तराधिकारी हुए पृथ्वीराज। कर्पूरदेवी के पिता अच्छलराज से अनंगपाल की भी घनिष्ठता थी। यह जयचन्द के लिये ईर्ष्या का कारण बना। इतिहास यह भी स्पष्ट

नहीं करता कि कमलादेवी का कोई पुत्र था—हाँ रासो अवश्य बताता है ।

भ्रम-निवारण

'रासो'—पृथ्वीराज रासो के कथनानुसार सोमेश्वर की पत्नी कमलादेवी (अनंगपाल की पुत्री) की कुक्ष से पृथ्वीराज का जन्म हुआ था। किन्तु ऐतिहासिक प्रमाणों[1] के आधार पर यह सिद्ध हो गया है कि पृथ्वीराज का जन्म कर्पूरदेवी, सोमेश्वर की द्वितीय पत्नी से, हुआ था, दूसरा पुत्र हरिराज था। कर्पूरदेवी चेदि-नरेश की (वर्त्तमान जबलपुर) पुत्री थीं। चेदिदेश के नृपति अच्छलराज उस समय त्रिपुरी में अपनी राजधानी बनाये हुए थे। ये कलचूरि क्षत्रिय थे।

पृथ्वीराज से पूर्व (सोमेश्वर की मृत्यु के पश्चात्) लगभग तीन वर्ष तक—कर्पूरदेवी शासन करती थीं[2]। सलाहकार परिषद् थी जिसके प्रधानामात्य कैमास (कदम्बवास) थे। कदम्बवास की देखरेख में ही पृथ्वीराज की शिक्षा-दीक्षा हुई और वे शस्त्रास्त्र-संचालन में निपुण हुए।

"पृथ्वीराज वीर-शिरोमणि थे[3]। पृथ्वीराज तलवार का धनी था। उसकी तलवार उठते ही ऐसा लगता था, मानो साक्षात् प्रलय तलवार लेकर कूद पड़ा हो।···इतनी तेज़ी से उसकी तलवार चलती थी कि यह पता लगाना कठिन हो जाता था कि तलवार उनके हाथ में है भी या नहीं।"

इसके अतिरिक्त "भारत के अन्तिम शासक" ग्रन्थ में लिखा है कि "वीर हो तो पृथ्वीराज जैसा, धनुषी हो तो जैसा पृथ्वीराज, तलवार हो तो जैसी पृथ्वीराज ···चौहानी तलवार की समता न थी[4]।

सम्राट पृथ्वीराज ने केवल तेरह वर्ष राज्य किया अर्थात् विक्रमी सम्वत् १२३६ से १२४९ तक। सिंहासन पर बैठते समय भी उनकी अवस्था लगभग १३ के ही मानी गई है। पृथ्वीराज का सम्पूर्ण जीवन वीर कार्यों की, गौरवपूर्ण युद्धों की अटूट शृंखला में आबद्ध रहा है, जिसके कारण उन्हें शाश्वत यश प्राप्त हुआ है। और जब तक वीरता जीवित है उनका नाम अमर रहेगा। कर्नल टॉड का कथन है—

---

(१) बिजोलिया का शिलालेख। (२) बिजोलिया का शिलालेख। (३) कर्नल टॉड—चौहानों का इतिहास। (४) रा० ब० स्व० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा।

"यद्यपि सदैव ही वीरों की सूची में चौहानों का नाम अग्रणी है तथापि पृथ्वीराज के राजत्व काल से, जो राजपूतो (क्षत्रियों) का आदर्श था—चौहान नाम पर ही सदैव के लिए वीरता की मुद्रा अकित हो गई है[१]।"

साहित्य-निर्माण

सम्राट पृथ्वीराज की राज-परिषद मे कई विद्वान थे[२]। साहित्य-चर्चा और धार्मिक शास्त्रार्थ होते रहते थे। किन्तु युद्धो की बाहुलता के कारण वे प्रकाश मे अधिक न आये । पृथ्वीराज रासो तथा पृथ्वीराज-विजय उनके समय के प्रमुख साहित्य-ग्रन्थ है। रासो की चाहे ऐतिहासिक महत्ता न हो, किन्तु काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से वह अनुपम ग्रन्थ है। उसकी प्रामाणिकता पर भी मुझे कुछ नही कहना, विद्वानों ने बहुत कुछ कहा है, कहते रहे है।

सम्राट की युद्ध-विजय

सम्राट पृथ्वीराज ने अनेक युद्धो मे विजय पाई थी। अनहिलवाड पट्टन सम्राट गुर्जरेश्वर भीमदेव द्वितीय को युद्ध मे परास्त किया। महोबा का युद्ध जन-जन की वाणी पर है। परमालदेव के रणबाकुरे सामन्त सम्राट पृथ्वीराज से जूझ पड़े थे, परिणाम सभी को ज्ञात है। कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द की पुत्री सयोगिता ने स्वयवर मे पृथ्वीराज का वरण किया था—वरमाला स्वर्ण-प्रतिमा मे डाल दी गई थी। पृथ्वीराज ने उसका हरण किया, लगभग कान्हदेव सहित १२०० वीरो ने अपनी आहुति देकर पृथ्वीराज की प्रतिष्ठा रखो।

शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी ने पृथ्वीराज के साथ छः युद्ध किये। पाँच युद्धो मे वह पराजित होकर या तो भागा अथवा क्षमा-याचना द्वारा जीवित बना रहा। उस समय प्राय क्षत्रिय-नरेश युद्ध-विजयो के शौकीन थे । विजेता का गौरवपूर्ण पद प्राप्त कर पराजित को जीवन-दान तक दे दिया करते थे, राज्य लौटाना तो साधारण बात थी।

सामाजिक स्थिति

तत्कालीन युग मे बहुविवाह की परम्परा प्रबल हो उठी थी । नरेशों ने एक

(१) कर्नल टॉड का अनाल्स एण्ड एण्टिक्वरी ऑफ राजस्थान। (२) जिनपालोदय का अप्रकाशित ग्रन्थ 'खर्त्र गच्छ'।

के बाद दूसरा-तीसरा इस प्रकार कई विवाह किये। वे इसे अपना गौरव मानते थे। युद्ध-विवाह बहुत ही ज़ोरों पर थे। बात-बात में तलवारें खिंच जाती थीं। विवाहों का निर्णय प्रायः युद्ध-भूमि में ही हुआ करता था। कुछ नरेश छल-प्रपंचों को भी हेय नहीं समझते थे। क्षत्रिय-धर्म और स्वामि-धर्म का पालन होता था।

एक धारणा और

सम्राट पृथ्वीराज के समय के कुछ सिक्के मिले हैं जिन पर एक ओर 'श्री हमीर महमद साम' और 'श्री महमदवने साय' अंकित है तथा दूसरी ओर पृथ्वीराज का नाम खुदा है। मेरी धारणा है कि ये सिक्के मुहम्मद गोरी की टकसाल में ढलते थे जिन्हें वह अपने अन्य अधीन राज्यों मे प्रसारित कर यश लूटता था। पृथ्वीराज अपने जीवन में एक बार—केवल एक बार पराजित हुए। मृत्यु के उपरान्त इस प्रकार के सिक्के ढलवाने का क्या अर्थ हो सकता है, विद्वान् स्वयं विचारें। इस तथ्य को भी नाटक में चित्रित किया गया है। सम्भव है यह धारणा पाठकों, इतिहास-कारों को एक नया दृष्टिकोण देगी। मनन, अध्ययन और अनुसन्धान का वाता-वरण बनेगा, यदि इस ओर तनिक भी ध्यान दिया गया।

सम्राट पृथ्वीराज का पराभव

परिस्थितियाँ दिन-प्रति-दिन बिगड़ती गई। अनेक वीर खप गये। चारों ओर शत्रु फैल गये। हाहुलीराय का विद्रोही होना, जयचन्द और चालुक्य भीमदेव का निमंत्रण-सहयोग पृथ्वीराज को ले बैठा। छठी बार तरायन अथवा नरायन के मैदान में ईस्वी सन् ११९२ में घमासान युद्ध हुआ। पृथ्वीराज बन्दी बना लिये गये और तुरन्त उनका वध कर दिया गया।

नाटक के पात्र

नाटक के पात्र प्रायः ऐतिहासिक ही हैं। जिनका नाटक में अस्तित्व है—सप्राण है वे ऐतिहासिक ही है। नाटक में मूल रूप से ऐतिहासिक धारणाओं, खोजों और तथ्यों को प्रमुखता दी गई है। रासो का आधार कल्पना में सम्मिलित कर लिया गया है। नाटक कैसा, क्या बन पड़ा है इसका निर्णय तो पाठक और समालोचक स्वयं करेंगे। हिन्दी जगत् की यदि कुछ सेवा हो सकी तो हर्ष ही होगा।

इस नाटक के सृजन में मुझे प्रो. जी. एल. जोशी, एम. ए., एम. कॉम, एफ.

आर. ई. एस., लन्दन ने पूरा-पूरा सहयोग दिया है। अतः मैं उनका आभारी हूँ। उनका अधिकार उन्हें देकर प्रसन्नता है।

पृथ्वीराज जन्मपक्ष
(ज्येष्ठ कृष्णपक्ष)
राधाकृष्ण भवन,
हाथीभाटा, अजमेर
२०१६ विक्रमी

—ओंकारनाथ दिनकर

पात्र-परिचय

पुरुष-पात्र

पृथ्वीराज	: सपादलक्ष (अजयमेरु)-नरेश सोमेश्वर चौहान के ज्येष्ठ पुत्र, दिल्लीश्वर आर्य्य-सम्राट।
रामदास	: पृथ्वीराज के राजगुरु।
चामुण्डराय	: चौहान शक्ति के सेनाध्यक्ष।
कैमास	: चौहान परिषद् के प्रधान अमात्य।
चन्द	: चन्दवरदाई, हिन्दी के आदि कवि, पृथ्वीराज रासो-प्रणेता, पृथ्वीराज के बालसाथी।
सामन्तसिंह	: चित्तोड़-नरेश, पृथ्वीराज के बहनोई।
भीमदेव	: चालुक्यराज, गुर्जरेश्वर, अनहिलवाड़ पाटन के सम्राट।
कान्हदेव	: पृथ्वीराज के चाचा, चौहान-परिषद् के प्रमुख।
प्रतापसिंह	: भीमदेव के चाचा, सारंगदेव के पुत्र।
जयतसिंह	: भीनमाल-नरेश भीमदेव तथा पृथ्वीराज के श्वसुर। इच्छनकुमारी के पिता।
सलखसिंह	: जयतसिंह के भ्राता।
अनंगपाल	: तोमरेश्वर, दिल्ली-नरेश, पृथ्वीराज के नाना।
चन्द्रशेखर	: तोमरेश्वर के राजगुरु।
ग़ोरी	: शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी, ग़ोर का शहँशाह, आर्यावर्त्त का आक्रामक, पृथ्वीराज का प्रमुख द्वन्द्वी।
मीर हुसैनखाँ	: शहाबुद्दीन ग़ोरी का भाई, भारत में पृथ्वीराज का शरणागत।
ऐबक	: ग़ोरी का भारत में प्रतिनिधि।
हाहुलीराय	: जालन्धर-नरेश, हमीर, पृथ्वीराज का सामन्त, बाद में विरोधी।
जयचन्द	: कान्यकुब्जेश्वर, आर्य्य-सम्राट, संयोगिता के पिता, पृथ्वीराज के विरोधी।
माधवभट्ट	: ग़ोरी का कोषाध्यक्ष, एक धनकुबेर व्यापारी।

इसके अतिरिक्त और भी कुछ पात्र हैं जिनका सम्बन्ध उन्हीं दृश्यों तथा घटनाओं से है।

स्त्री-पात्र

कर्पूरदेवी : सोमेश्वर देव की राज-महिषी, चेदिराज अछलदेव की पुत्री, आर्य्य-सम्राट पृथ्वीराज की माता, राजमाता।

इच्छनकुमारी : परमार जयतसिंह की पुत्री, आर्य्य-सम्राट पृथ्वीराज की राज-महिषी, भारत-साम्राज्ञी।

संयोगिता : जयचन्द की पुत्री, पृथ्वीराज की राजमहिषी।

इनके अतिरिक्त प्रातहारियाँ, सेविकाएं आदि-आदि।

अङ्क : पहला

दृश्य : एक

काल : विक्रम की तेरहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध ।
समय : सन्ध्या से पूर्व ।
स्थान : अजयमेरु-स्थित विशालसर के मध्य राज-
प्रासाद-उद्यान ।

[उद्यान लता-कुञ्जों के कारण चित्ताकर्षक है। चारों ओर हरीतिमा छाई हुई है। विविध प्रकार के पुष्प खिल रहे हैं। लताएँ झूल रही हैं। विशालसर के अथाह जल में एक साधारण उद्वेलन हो रहा है। यदा-कदा जल-तरंगें प्रबल हो उठती हैं और सहसा विलीन हो जाती हैं। कभी-कभी वे इन्द्र-धनुषी आकार के तट से जा-जाकर टकराती हैं तो पुनः पीछे हटती हुई जल-राशि में समा जाती हैं।

उद्यान में एक ओर स्वर्गीय आर्य-सम्राट् विग्रहराज विशालदेव तथा उनके उत्तराधिकारी पुत्र स्वर्गीय महाराजाधिराज श्री सोमेश्वर की भव्य स्वर्ण-प्रतिमायें अश्वों पर दृष्टिगोचर होती हैं।

सहसा एक ओर से राजमाता कर्पूरदेवी हर्ष और विषाद की मुद्रा प्रगट करती हुई उन प्रतिमाओं के समीप पहुँचती है कि उनकी प्रधान परिचारिका सुभद्रा प्रवेश करती है।]

सुभद्रा : राजमाता की जय हो !

कर्पूरदेवी : (**चौंककर**) कौन ! (**मुड़कर देखती हुई**) सुभद्रा ?

सुभद्रा : (**सविनय**) राजमाता, अपराध क्षमा हो, एकान्त-भ्रमण में बाधक हुई हूँ। राजगुरु पधारे हैं।

कर्पूरदेवी : (**विचारती हुई**) राजगुरु ! इस समय ?

सुभद्रा : कुछ आवश्यक चर्चा करना चाहते हैं।

कर्पूरदेवी : (**विचारती हुई**) आवश्यक चर्चा ! कल की विजय-यात्रा के सम्बन्ध में ?

सुभद्रा : नहीं कह सकती राजमाता !

[**दोनों चलकर स्वर्ण-प्रतिमाओं के समीप होती हैं**]

कर्पूरदेवी : कहाँ हैं इस समय ?

सुभद्रा : आपके मंत्रणा-कक्ष में प्रतीक्षा कर रहे हैं।

कर्पूरदेवी : ठीक हुआ। मुझे भी कुछ आदेश लेना था। सुभद्रा, जाकर राजगुरु को सूचित कर कि अभी उपस्थित हुई।

[**नतमस्तक सुभद्रा प्रस्थान करती है। राजमाता विग्रह-राज विशालदेव की प्रतिमा के समीप पहुँचकर**]

कर्पूरदेवी : आर्यसम्राट् ! भारत-वसुन्धरा युग-युग से ऋणी चली आ रही है। आपके यश, गौरव और आर्य संस्कृति की रक्षा कर सकूँ यही आशीर्वाद लेने आई हूँ। कल आर्यवर्त्त में गर्जनिकों का आतंक था तो आज फिर गौर भारत-भूमि पर बवण्डर खड़ा करना चाहते हैं। पश्चिमोत्तर सीमा-प्रदेश से नित्य नये झंझा उठ रहे हैं, आशंका है, वे कहीं आर्यवर्त्त तक न बढ़ जायँ। एक नारी में इतना साहस कहाँ कि इन भयानक झंझाओं को रोके। आर्यसम्राट् ! (**सोमेश्वर की प्रतिमा के समीप होकर**) आपके यशस्वी पुत्र की शक्ति के सम्मुख किसी का साहस न हुआ कि कोई आपकी पवित्र भूमि की ओर आँख उठाकर देखता। आर्यपुत्र ने तो सपादलक्ष सीमा का विस्तार ही किया था। (**सोमेश्वर की प्रतिमा का चरण पकड़ती हुई**) आर्यश्रेष्ठ ! आपके ऋण से उऋण होना चाहती हूँ, मैंने पूर्णतः आपके आदेश का

पालन किया है। आपकी आत्मा स्वर्ग से देख रही है, मेरी ऐसी ही कल्पना नित्य रही है। अब आपका राम समर्थ हो गया है। आप ही के समान उसमें आत्म-गौरव और त्याग की भावना देख रही हूँ।

[**सुभद्रा का पुनः द्रुत गति से प्रवेश**]

सुभद्रा : राजमाता !

[**सुभद्रा नतमस्तक खड़ी रह जाती है, राजमाता सोमेश्वर का चरण छोड़ कुछ आगे चल देती है**]

कर्पूरदेवी : (**खिन्नतापूर्वक**) सुभद्रा ! (**भाव-परिवर्त्तन करके**) सुभद्रा, अभी कुछ क्षणों में ही पहुँचती हूँ।

सुभद्रा : राजमाता !

[**नतमस्तक प्रस्थान। राजमाता कर्पूरदेवी पुनः उसी प्रतिमा के समीप होकर**]

कर्पूरदेवी : युवराज के प्रति सपादलक्ष का प्रत्येक व्यक्ति स्नेह और श्रद्धा प्रकट कर रहा है। उसके अभिषेक के लिए जन-समुदाय उत्कण्ठित है। उसके हृदय-सागर में हर्षोल्लास समा नहीं रहा है, आर्य-पुत्र···आर्य-पुत्र वह अपनी सीमा को छोड़ देना चाहता है, आर्यश्रेष्ठ, आपकी थाती अब आपके राम––युवराज को सौंप देना चाहती हूँ। मुझे विश्वास है कि पृथ्वीराज के समर्थ कन्धे इस महान् भार को उठा सकेंगे। पृथ्वी का अनुज हरि लक्ष्मण-सा ही—छाया के समान उसके साथ लगा रहता है। (**भाव-विभोर होती हुई**) देखिए ! देखिए ! आर्यपुत्र ! राम-लक्ष्मण की जोड़ी। वे चिरायु हों। भारत-भूमि–मातृभूमि की रक्षा करने में पूर्ण समर्थ हैं। वशिष्ठ से गुरु राजगुरु का उन्हें आशीर्वाद मिलता रहा है। कैमास ने धनुष तथा खड्ग-संचालन में निपुण कर दिया

है। जा रही हूँ, राजगुरु प्रतीक्षा कर रहे हैं। आपका मंगल आशीर्वाद लिए जा रही हूँ। कल विजयादशमी का पर्व है, प्रयत्न करूँगी कल ही अभिषेक-संस्कार पूर्ण हो जाय। क्षमा ! मेरे अन्तःवासी स्वामी (**चरण स्पर्श करती हुई**) इन चरणों में···।

[**सहसा सुभद्रा का पुनः प्रवेश**]

सुभद्रा : मातेश्वरी···।

[**नतमस्तक खड़ी रह जाती है**]

कर्पूरदेवी : (**चौंककर**) चल सुभद्रा, चल।

सुभद्रा : प्रधानामात्य भी पधारे हैं।

कर्पूरदेवी : (**विचार-ग्रस्त होती हुई**) प्रधानामात्य कैमास भी पधारे हैं !

सुभद्रा : हाँ, मातेश्वरो ! राजगुरु के आदेश से सेवाध्यक्ष चामुण्डराय भी आने वाले हैं।

कर्पूरदेवी : (**कुछ आगे चलकर**) सेनाध्यक्ष···सुभद्रा, तब क्या किसी अमंगल की आशका है ?

सुभद्रा : मैं तो इतना ही जान सकी हूँ कि उनकी मुखाकृतियाँ गम्भीर हैं। वे सब आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

कर्पूरदेवी : लगता है कोई विशेष घटनाचक्र घूमना चाहता है।······ आर्यभूमि पर किसी, आर्यभूमि पर कहीं संकट के मेघ···चल, शीघ्रतापूर्वक चलें।

[**सुभद्रा के आगे-आगे द्रुत गति से और चिन्ताभार से गंभीरता धारण करती हुई राजमाता कर्पूरदेवी का प्रस्थान**]

[**यवनिका**]

दृश्य : दो

स्थान : राजमाता कर्पूरदेवी के राज-प्रासाद का मंत्रणा-कक्ष।
समय : सूर्यास्त के पश्चात्—दीप-वेला।

[मंत्रणा-कक्ष चौहान-कालीन कला-कौशल के साधनों से भली-भाँति सुसज्जित है। भवन में यत्र-तत्र रखे हुए आधार-स्तम्भों पर अनेक कलापूर्ण चित्र रखे हुए हैं। अनेक स्वर्ण-दीप-गुच्छ छत में झूल रहे हैं। भवन के कपाटों पर स्वर्ण की सूर्य-आकृतियाँ उभरी हुई दृष्टि-गोचर हो रही हैं। समस्त भवन में सुवासित गंध फैल रही है। भवन में सामने एक लघु स्वर्ण-सिंहासन रिक्त है तथा उसके पास ही स्वर्ण-मणि-जटित एक दूसरे आसन पर राजगुरु रामदास तथा कुछ नीचे स्थित आसनों पर कुछ व्यक्तिविशेष बैठे हुए हैं। प्रधान-अमात्य कैमास तथा उनके समीप चामुण्डराय बैठे दिखाई देते हैं। यदा-कदा राजगुरु तथा कैमास के बीच साधारण वार्तालाप हो जाता है। पुनः वातावरण शान्त हो जाता है। सबकी मुखाकृतियों पर गंभीरता के चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे हैं।]

रामदास: महामात्य, हमने नगर-भ्रमण के अवसर अनुभव किया था कि जनता में कुछ आशंका फैलती जा रही है। वैसे तो युवराज के प्रति उनके हृदय में प्रेम और श्रद्धा है।

कैमास : गुरुदेव, सम्भव है गोर के कुछ गुप्तचर नगर में आ गये हों। गोर हमारी गतिविधियों पर आँख गढाये रहते हैं।

चामुण्डराय : किन्तु अभी तक कोई गुप्तचर हमारे सैनिकों की दृष्टि में नहीं आया। कल विजय-यात्रा निकलेगी, हमें भी छद्मवेश में कुछ गुप्तचर नगर में छोड़ देने चाहियें। हो सकता है कुछ पता लगे।

रामदास : वैसे सम्भव तो है कुछ विदेशी तत्व शाकम्भरी जन-पद में गौर-आक्रमण के समाचार फैलाते रहे हों। साथ, हमने यह भी अनुभव किया है कि नागरिक युवराज के राज्यारोहण को उचित ही समझते हैं, यद्यपि युवराज की अवस्था अभी कम ही है।

कैमास : केवल बारह वसन्त बीते हैं। ज्येष्ठ मास में उनकी जन्म-तिथि मना ही चुके हैं।

चामुण्डराय : नगर तोरणद्वारों एवं बन्दनवारों से सजाया गया है। हाट-वीथियाँ सुवासित गंध से बराबर सींची जा रही हैं। उनमें फैली भीनी-भीनी गन्ध का मैंने भी अनुभव किया है, गुरुदेव !

रामदास : सन्देह नहीं, प्रजा में हर्ष और उल्लास पर्याप्त है। कैमास, उचित ही है, युवराज का अभिषेक हर्षोल्लासपूर्वक कर देना चाहिये। चौहान कुल की परम्पराओं का निर्वाह भी होना चाहिये, किन्तु इतने थोड़े समय में यह सब हो सकेगा ?

कैमास : हो सकता है गुरुदेव ! यथासम्भव सारी विधियाँ सम्पन्न हो जायँगी। सपादलक्ष के माण्डलिक नरेश राजमाता को विजयादशमी की भेंट देने उपस्थित हो ही रहे हैं। बहुतों की स्वीकृति भी आ गई है।

रामदास : (**दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए**) आर्यवर्त्त पुण्य भूमि पर विदेशियों की दृष्टि बराबर लगी हुई है। हम भारतवासी सुख-शांति की निद्रा ले ही नहीं पाते।

चामुण्डराय : आचार्य ! शासन-तंत्र शक्ति के सहारे ही टिका हुआ है। क्षत्रिय वीर सदैव से बलिदान और त्याग करते आये हैं। इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है।

रामदास : सोमेश्वर अनंगपालदेव के कुल-पुरोहित की भविष्यवाणी पर हमने भी मनन किया है, उसे गहराई से देखा है। जब उसकी

कल्पना हो आती है तो चामुण्डराय, शरीर में सिहरण उठ खड़ी होती है। दिल्लीश्वर पर गिरने वाली युद्धाग्नि की लपटें समस्त सपादलक्ष में फैल जायँगी। म्लेच्छों का आधिपत्य, आर्यभूमि पर आतताइयों की बर्बरता का ताण्डव, कैमास, बड़ी भयंकर कल्पना है। आर्यवर्त्त की संस्कृति, उसका कला-कौशल, उसका वैभव सब धूल में मिल जायँगे। इस समय आर्यवर्त्त को समर्थ, योग्य और त्यागवीर कर्मण्य शासक की आवश्यकता है। अब तक सपादलक्ष के निस्स्वार्थ मन्त्रि-मण्डल ने व राजमाता कर्पूरदेवी ने अपनी अलौकिक त्याग-भावना का परिचय दिया है।

चामुण्डराय : प्रधानामात्य ने सपादलक्ष की, अपने अन्यान्य गुणों से कीर्ति स्थिर रखी है। आर्यवर्त्त का मस्तक आज भी गर्वोन्नत है। जिस त्याग-भावना, अनथक परिश्रम और लगन से प्रधानामात्य ने अपने कर्त्तव्य का निर्वाह किया है वह किसकी दृष्टि से छिपा है!

कैमास : गुरुदेव का वरद हस्त मुझे प्राप्त है। उसी का सम्बल मेरा नेतृत्व कर रहा है। मातृभूमि के प्रति मेरी जो भी निष्ठा है उसका श्रेय सभी सहयोगी मन्त्रिमण्डल को है।

रामदास : वह युग था, जब चौहान-नरेशों ने आतंकवादियों का दमन कर राज्य-विस्तार किया, और यह युग प्रारम्भ ही हुआ था कि हम अपने उद्देश्यों की पूर्ति—आर्यवर्त्त की प्रजा की समृद्धि—के लिये कटिबद्ध होते (**पुनः दीर्घ निश्वास**) किन्तु आये दिन की आशंकाएँ हमारे मार्ग में बाधा खड़ी कर देना चाहती हैं।

चामुण्डराय : गुरुदेव, विश्वास करें सपादलक्ष की सीमा की रक्षा करने योग्य अभी क्षत्रिय वीर शेष हैं, हमारे सैनिकों की कृपाणें शत्रु-सैन्य का विनाश करने में समर्थ हैं। सिंह का पुत्र सिंह ही होता है गुरुदेव! नाहर वीर युवराज पृथ्वीराज के नेतृत्व में चौहान-

राज्य का प्रत्येक माण्डलिक अपना गौरव बनाये रखना चाहता है।

रामदास : शुभ हो, चामुण्डराय शुभ हो। यदि ऐसा हो सका तो आर्य-भूमि पर विदेशी सत्ता अपना अधिकार तो क्या आतंक तक न जमा सकेगी। किन्तु हमें आशंका है, तुम्हारा कथन सत्य हो सकेगा…! और…और चामुण्डराय हमारी आशंका निरी बोदी नहीं है, उसकी नींव केवल बालू पर नहीं टिकी है।

कैमास : गुरुदेव ! हमें प्रयत्न करना चाहिये। हमें शक्ति संगठित करनी चाहिये। वर्षों की सोई हुई शक्ति में घुन लग सकता है, क्यों सेनाध्यक्ष !

चामुण्डराय : चामुण्डराय अपनी शक्ति पर विश्वास कर चुका है, उसकी कृपाण में वह शक्ति विद्यमान है जो शत्रु का मस्तक-भेदन कर सके।

रामदास : (**दीर्घ निश्वास लेकर**) आर्यभूमि म्लेच्छों द्वारा पद-दलित होगी यही आशंका रह-रहकर उठ रही है।

[सहसा द्रुत गति से राजमाता कर्पूरदेवी का प्रवेश। चामुण्डराय एवं कैमास सम्मान प्रदर्शित करते हैं। राजगुरु को अभि-वादन कर राजमाता सिंहासन पर बैठती है।]

कर्पूरदेवी : गुरुवर्य, कल युवराज का अभिषेक कर देना उचित रहेगा। …आशंका क्यों ?

रामदास : यही हम चाहते हैं, युवराज का अभिषेक !

कर्पूरदेवी : यह तो हमारी इच्छा की पूर्ति की जा रही है, आशंकाएँ निर्मूल हों।

कैमास : राजमाता ! युवराज के अभिषेक की आशंका नहीं है, वह तो…होगा ही किन्तु…।

कर्पूरदेवी : किन्तु क्या अमात्यशिरोमणि ?

रामदास : शत्रु आर्यभूमि पर अपने पैर फैलाना चाहता है। हमें उस पैर को···

[**पृथ्वीराज तथा हरिराज का सवेग प्रवेश**]

पृथ्वीराज : हम उस पैर को काटकर फेंक देंगे। जो पैर हमारे अनर्थ की कल्पना से हमारी भूमि—हमारी मातृभूमि की ओर बढ़ना चाहता है उसे नष्ट करने की क्षमता पृथ्वीराज को परम्परा से मिली है।

[**पृथ्वीराज एक आसन पर बैठते हैं तदनन्तर हरिराज**]

कर्पूरदेवी : धन्य हो पुत्र ! तुमने माता के दूध की लाज रख ली।

रामदास : हम सोचते थे राजमाता कि पृथ्वीराज अभी बालक है।

हरिराज : गुरुदेव क्षमा, विश्वामित्र को श्रीराम पर विश्वास था !

रामदास : (**सम्‌दुहास्य**) और लक्ष्मण पर नहीं ?

हरिराज : (**लज्जापूर्वक**) यह गुरुदेव का आशीर्वाद है।

रामदास : पृथ्वीराज, तुम शासन-सूत्र सम्भालने योग्य प्रतीत होते हो।

पृथ्वीराज : (**सविनय**) गुरुदेव ! शासन-सूत्र जिन हाथों में है, रहे। मुझे आदेश दो शत्रु का सिर काटकर इन चरणों में रख दूँ। यदि युद्ध-क्षेत्र में जाने की आवश्यकता है तो मैं अभी प्रस्तुत हूँ।

कर्पूरदेवी : नहीं वत्स, पहले शासन-सूत्र ग्रहण करो तब युद्ध-भूमि में उतरो।

रामदास : ऐसा ही होगा। पृथ्वीराज शासन-भार सम्भालेंगे। स्वर्गीय देव सोमेश्वरराज का स्वर्गवास हुए तीन वर्ष से अधिक बीत चुके हैं। पृथ्वीराज, तुम्हारी जननी ने—राजमाता ने अपूर्व त्याग का परिचय दिया है। वैधव्य की घड़ियाँ वर्षों के समान होती हैं। उसकी तीव्र वेदना में घुल-घुलकर भी राजतंत्र की बागडोर जिस

सफलता से सम्भाली है, वह अनुकरणीय है और प्रशंसनीय भी। राजतन्त्र की रक्षा के लिये राजमाता ने वियोग की घड़ियाँ काटी हैं अन्यथा उनका संकल्प दृढ़ था---सती धर्म का पालन करना चाहती थीं किन्तु हमारे अनुरोध ने···पृथ्वीराज, (**सव्यथा**) पृथ्वीराज, चौहान-शिशुओं को समर्थ बनाने में योग दिया है, उन्होंने। केवल सपादलक्ष ही नहीं, समस्त आर्यवर्त्त ऋणी रहेगा।

कर्पूरदेवी : (**अश्रु-पूरित नेत्रों से**) वत्स पृथ्वीराज! गुरुदेव का आदेश और आर्यवर्त्त की पुकार जब हमारे कानों में पड़ी तो हमें अपनी भावना, और अपने नारी-कर्त्तव्य को तिलाञ्जलि देनी पड़ी। आर्यपुत्र से वियोग की इस दीर्घ अवधि में, इस शरीर ने श्वास ली है। इस देह ने क्षात्र-धर्म के निर्वाह का संकल्प लिया था, उस संकल्प को अब तुम्हें पूरा करना होगा।

पृथ्वीराज : मातेश्वरी के सुख-ऐश्वर्य के लिये तुम्हारा पुत्र अपना जीवन अर्पण कर देगा।

कर्पूरदेवी : पृथ्वी, तुम हमारे पुत्र···केवल हमारे ही पुत्र नहीं हो। तुम पृथ्वी-पुत्र हो। हमने तुम्हें केवल कुछ समय तक ही उदरस्थ किया था किन्तु (**धरती की ओर संकेत करके**) इस माता ने जन्म के पश्चात् तुम्हारा भार ढोया है। तुम उसके वक्षस्थल पर नाचे-कूदे हो, खेले हो, उसके वक्ष को मलमूत्र से अपवित्र किया है, उसके वक्ष पर ठोकरें भी मारी हैं किन्तु उसने तुमसे घृणा नहीं की, सदैव दुलार दिया है उसने। और···और वही दुलार तुम्हें जीवन भर मिलता रहेगा, हम न होंगीं तब यही तुम्हारी माँ होगी। जन्मभूमि सर्वोपरि है पृथ्वीराज! (**साश्रु-नेत्रों से भर्राई हुई ध्वनि**) कहो···जन्मभूमि की जय! कहो मातृभूमि की जय! कहो मातृभूमि की जय! मातृभूमि की जय!

पृथ्वीराज, हरिराज: मातृभूमि की जय ! जननी जन्मभूमि की जय !

[तदनन्तर अन्य सभी मातृभूमि का जय-जयकार करते हैं। कक्ष-भवन में अन्धकार होने लगता है, दो युवतियाँ स्वर्ण दीपों को प्रज्ज्वलित करती दृष्टिगोचर होती हैं। कक्ष में प्रकाश फैल जाता है।]

रामदास : वत्स पृथ्वीराज, प्रकाश-पुञ्ज दीपों के प्रकाश के समान तुम्हारे यश-गौरव प्रकाशित रहें।

[सहसा चन्द का प्रवेश]

चन्द : जब तक भूमण्डल पर सूर्य, चन्द्रमा और आसमान रहें चौहान-कुल-दीपक का प्रकाश उज्ज्वल रहे। राजमाता की जय हो। गुरुदेव प्रणाम।

रामदास : आओ कविवर चन्द !

[नेपथ्य में रात्रि-आगमन की सूचक मंगल-ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं।]

चन्द : मंगल-संकल्पों को मंगल-ध्वनियों का सहयोग मिल रहा है।

चामुण्डराय : गुरुदेव ! हम लोग अभिषेक की चर्चा में ही उलझ गये। जिस उद्देश्य से हम यहाँ आये थे थोड़ा उस पर भी विचार कर लेते।

कर्पूरदेवी : गुरुदेव आदेश दें।

रामदास : पृथ्वीराज, न्याय-दण्ड के तुम अधिकारी होने जा रहे हो। राजमाता से तुम्हें उत्तराधिकार मिल रहा है। वत्स ! न्याय और उदारता दोनों की रक्षा करते हुए शासन करना है। राजतन्त्र में निरंकुशता प्रवेश न पा जाय कहीं।

पृथ्वीराज : गुरुदेव का आशीर्वाद मेरा मार्ग प्रशस्त करेगा।

रामदास : हमने सोचा था कि आर्यवर्त्त पर आने वाले संकट की ओर

युवराज का ध्यान आकर्षित कर दें, किन्तु हमें विश्वास हो गया है कि राजमाता और युवराज दोनों ही अपने कर्त्तव्य के प्रति जागृत हैं। राजमाता, उत्तराधिकार से परिवर्त्तन के पश्चात् युवराज उस भार को स्वीकार करने के लिये कृत-संकल्प हैं।

पृथ्वीराज : गुरुदेव, मृगया से लौटते समय हमने भी कुछ ऐसी ही चर्चाएँ सुनी थीं। कवि-शिरोमणि चन्द मेरे साथ थे। पश्चिमोत्तर सीमा-प्रदेश में म्लेच्छ पुनः सक्रिय होते जा रहे हैं। अराजकता और उत्पातों का नर्तन हो उठा है। उस भूमि में उठ रहे बवण्डर से हमारी भूमि भी प्रभावित होगी, यह सत्य है।

कैमास : दिल्लीश्वर अनंगपालदेव की आयु ढलती जा रही है। स्वर्गीय विग्रहराज के समय तोमरेश्वर हमारे माण्डलिक थे, किन्तु स्वर्गीय देव सोमेश्वरराज से अपनी पुत्री ब्याह कर उन्होंने उस परम्परा में थोड़ी ढिलाई बरती है।

चामुण्डराय : हमारा कर्त्तव्य है कि भावी संकट से उन्हें सावधान कर दें। त्रिपुरी-नरेश की शक्ति हमारे साथ होगी। अभी कुछ समय पूर्व राजमाता के भ्राता पधारे थे।

कर्पूरदेवी : पिता का सन्देश था गुरुदेव, कि सकट के समय अछलराज अपने दौहित्र की रक्षा न करेगा तो किसकी करेगा। तोमरेश्वर तथा चेदि-नरेश के पारस्परिक सम्बन्ध भी अच्छे हैं। तोमरेश्वर हम पर भी वही दुलार रखते हैं जैसा अपनी पुत्री राजमहिषी कमलादेवी पर।

कैमास : हमें अपनी सेनाएँ दिल्ली के उत्तर-पूर्वी प्रदेश की सुरक्षा के लिये भेज देनी चाहियें।

चामुण्डराय : उचित परामर्श है। सामरिक महत्त्व के स्थानों पर हमें नियंत्रण रखना चाहिये।

कर्पूरदेवी : इसके अतिरिक्त हमारा एक और भी कर्त्तव्य है। भारत-भूमि के दूसरे कितने ही राज्य अव्यवस्थित हो गये हैं, उनकी शासन-व्यवस्था ढिलमिलाने लगी है। उन राज्यों को एक-सूत्र में पिरोना होगा।

रामदास : राजमाता की सूझ गहरी है।

पृथ्वीराज : भारतीय नरेश स्वार्थ-साधना में रत हैं। वे समझते हैं कि चौहान-शक्ति के होते हुए उन्हें विदेशो शक्तियों से संघर्ष नहीं लेना पड़ेगा।

रामदास : जहाँ तक चौहान समर्थ हैं, उन पर आँच नहीं आ सकती, यह उनका भ्रम है।

चन्द : इसी भ्रम में वे लोग आन्तरिक कलह में संलग्न हैं। इतिहास के पृष्ठ भी यही बतला रहे हैं कि जब-जब विदेशी शक्तियों ने आतंक फैलाया है अथवा कहिए आर्यभूमि पर जब भी बर्बरता का नृत्य हुआ है, समर्थ और शक्ति-सम्पन्न जातियों ने ही उनसे द्वन्द्व लिया है।

चामुण्डराय : उन बिखरी शक्तियों को, चाहे वे छोटी ही क्यों न हों, चौहान-संगठन में लेना उचित ही रहेगा।

कर्पूरदेवी : जब देश पर बाहरी शत्रु की आशंका है तो इस अवस्था में उनका भी योग लेना आवश्यक है। सेनाध्यक्ष के इस कथन को सभी का समर्थन मिलेगा।

रामदास : साथ ही कान्यकुब्जेश्वर राठौर जयचन्द आदि भी कुछ ऐसे नरेश हैं जो सपादलक्ष के गौरव से ईर्ष्या रखते हैं। वे शक्ति-सम्पन्न भी हैं। उस ओर से भी शंकित रहने की आवश्यकता है।

चन्द : अपराध क्षमा हो गुरुदेव ! आशंका का उद्वेग भयानक और अन्तःशक्ति द्वारा ··तीखा होता है। उसमें सागर-सी शक्ति है। सब डूब जायेंगे उसमें।

रामदास : ठीक है कविराज, हमें तुम्हारी वीरता में सन्देह नहीं है। पृथ्वीराज के प्रति अपनत्व भावना भी तुममें प्रबल है। शक्ति से कुछ पा भी सकते हो, किन्तु जो कार्य मित्रता और सह-अस्तित्व की भावना से पूरा होता हो वहाँ शक्ति का प्रयोग अनुचित है। जिस कार्य को शक्ति सौ वर्षों में भी पूरा नहीं कर सकती वहाँ मित्रता, प्रेम, त्याग और सह-अस्तित्व की भावना केवल कुछ क्षणों में ही पूरा कर डालती है। अच्छा हो, भारतीय-नरेशों का संगठन बिना शक्ति (बल) के ही किया जाय—उन्हें एक-सूत्र में पिरोया जाय। परिस्थितियाँ विवश कर देती हैं, कविराज ! कभी-कभी क्रोध को पी जाना पड़ता है। शक्ति-मद को दबाये रखना पड़ता है। क्रोधरूपी कालकूट को जिसने पचा लिया है वह निरंतर विजय प्राप्त करता रहता है। वह कहीं भी पराजित नहीं होता। अवसर देखकर कार्य करना होता है कविराज !

चन्द : गुरुदेव, इतिहास साक्षी है, चौहान-नृपतियों ने अपनी शक्ति के सहारे ही अपने शत्रुओं पर अंकुश रखा है।

रामदास : समय-समय की बात है। कभी हमें शक्ति-बल का प्रयोग करना पड़ा है तो कभी प्रेम और विनय का आश्रय भी लेना पड़ा है। राजनीतिके भेदों को तुम स्वयं समझते हो। स्मरण रखो चन्द, कभी-कभी सत्य असत्य से भी भयानक हो जाता है। देश के आन्तरिक संगठन के लिये कभी शक्ति का सहारा लेना पड़ता है तो कभी अपने अस्तित्व को क्षीण भी करना होता है। जब कभी राजतंत्र शक्ति का आश्रय लेकर राष्ट्र की आन्तरिक कलह मिटाने में लग जाते हैं तो अहित किसका होता है ! अपना ही, भारत के निवासियों का ही।

पृथ्वीराज : (**सविनय**) गुरुदेव का परामर्श सामयिक है। फिर भी

स्वीकार करता हूँ कि शक्ति के बिना विजय सम्भव न होगी। हम भारतीय बिखरे पड़े हैं। एक नेतृत्व, एक छत्र के नीचे एकत्रित होना नहीं चाहते—एकत्रित होकर, संगठित होकर प्रजा की समृद्धि के लिये किसी कार्य को सिद्ध नहीं करते।

रामदास : वत्स पृथ्वीराज, सत्य के सुकोमल हृदय पर असत्य का ताण्डव होता है, किन्तु अन्त में विजय सत्य की ही होती है। मनुष्य का हृदय स्वभावतः सत्य, अहिंसा और प्रेम का उपासक रहा है, किन्तु जब उसकी स्वार्थ-भावना में ठेस पहुँचती है तो प्रतिक्रिया जन्म लेने लगती है। प्रतिक्रिया के पनपने पर अपराध प्रेरणा लेने लगता है। वत्स! अब जब कि तुम शासन की बागडोर सम्भालने जा रहे हो—एक भारी दायित्व तुम पर आ पड़ा है जिसमें तुम्हारा, तुम्हारे वंश का, तुम्हारी प्रजा का कल्याण छिपा हुआ है। वत्स! तुम्हें मानव की भावना का—उसकी महती भावना का ध्यान रखना होगा।

चामुण्डराय : गुरुदेव! (**सविनय**) मानव परिस्थितियों के वश अपने हितों की रक्षा करता आया है—अपने गौरव और यश का सम्पादन भी।

रामदास : मानव को परिस्थितियों की शृंखला में बँध नहीं जाना चाहिये। राष्ट्र-हित, मानव-हित और अपनी भलाई के लिए उसे जागरूक रहना पड़ता है। यदि रक्त शरीर के किसी एक विशेष अंग में रुक जाय तो वह क्रिया-शून्य हो जायेगा। उस अंग में जीवन कहाँ रहेगा, यह हम स्वीकार करते हैं, किन्तु हमारे कथन का अभिप्राय यह नहीं है कि शक्ति-प्रयोग बिल्कुल ही न किया जाय। आवश्यकता और उपादेयता देखकर करना भी पड़ेगा। राष्ट्र-हित सर्वोपरि है, उसके हित में बाधा नहीं पहुँचनी चाहिये।

पृथ्वीराज : ताप से पीड़ित राष्ट्र के लिये कड़वी औषधि का सेवन करना ही होगा। जैसे भूले हुए को मार्ग बतलाना श्रेष्ठ है उसी प्रकार दंभी का दंभ दूर करना आवश्यक है। सागर से यही कुछ सीखा है गुरुदेव !

रामदास : सागर से ?

पृथ्वीराज : हाँ गुरुदेव ! सागर में वह शक्ति विद्यमान है कि चाहे तो वह एक क्षण में समस्त विश्व को अपने में समेट ले, किन्तु फिर भी वह अपनी मर्यादा नहीं खोता। वह अपनी महानता को जानता है। चौहानों को भी अपने गौरव पर आँच नहीं आने देनी है। साधारण उपचार से ठीक होने वाले अंग पर शल्यक्रिया की आवश्यकता नहीं पड़ती गुरुवर्य ! किन्तु आवश्यकता पड़ने पर समस्त शरीर में विष फैलने के भय से रोगी अंग काट भी देना पड़ता है।

चन्द : इसे तो भविष्य पर ही छोड़ना होगा। सपादलक्ष की कीर्ति, श्रीवृद्धि से अनेक भारतीय नरेश ईर्ष्या रखते हैं। यदि एक पड़ोसी दूसरे पड़ोसी की उन्नति में ईर्ष्या रखेगा तो वह स्वयं अपना भी हित न कर सकेगा। पड़ोसी को उसकी समृद्धि में योग देने से दोनों का कल्याण होगा। बाहरी शक्ति से लोहा लेने का अवसर ही न आ पायेगा। गुर्ज्जरेश्वर भीम चालुक्य भी इसी प्रकृति के हैं। चौहान-वैभव को वह फूटी आँख से भी देखना उचित नहीं समझते।

कैमास : यह सत्य कहा कविराज ! जब से युवराज वयस्क हुए हैं उनकी गिद्ध-दृष्टि इस ओर लगी हुई है।

रामदास : क्या, उन्होंने फिर कोई छेड़-छाड़ की ?

कैमास : नित्य प्रति की घटनाएँ हैं। गुर्ज्जरेश्वर की सीमा हमारे राज्य

से कई स्थानों पर मिलती है। सीमा पर चालुक्यराज के सैनिक उत्पात मचाते रहते हैं। कभी किसी ग्रामीण का अपहरण करते हैं तो कभी बलात् पशु हाँक ले जाते हैं।

चन्द : इतना ही क्यों ? यह क्यों नहीं कहते कि एक बार युवराज पृथ्वीराज आखेट खेलते-खेलते उस ओर निकल गये थे। उन्हें अकेले देखकर गुर्ज्जर सैनिकों ने एक साथ आक्रमण कर दिया। किन्तु शक्ति-पुंज युवराज ने उन्हें मार भगाया।

रामदास : (**कुछ सावधान होकर**) तब तो युवराज के जीवन पर संकट आ गया होगा। गुर्ज्जर अपनी कुटिलता के लिये प्रसिद्ध तो हैं ही। उस ओर से भी आँखें बन्द नहीं की जा सकतीं। स्वर्गीय देव श्री सोमेश्वरराज ने विजय-यात्रा कर सपादलक्ष की सीमा जिस समय गुर्ज्जर सीमा से मिला दी थी उसी समय से चालुक्य-राज ईर्ष्या-अनल में जल रहे हैं।

चन्द : युवराज पर आक्रमण साधारण घटना नहीं है। यह एक कुचक्र है जो वहाँ नित्य घूमा करता है, कभी किसी कारण को लेकर और कभी किसी कारण को लेकर। सच कहा जाय तो कहना होगा कि गुर्ज्जर चौहानों से उलझना चाहते हैं। ऐसी घटनाएँ उनकी युद्ध-इच्छा का पूर्वरूप हैं। हमें सतर्क रहना चाहिए।

पृथ्वीराज : चौहानों की कृपाणों में वही शक्ति है जो वर्षाकाल में विद्युत् में छिपी रहती है। जहाँ गिरती है वहीं सर्वनाश कर देती है।

रामदास : पृथ्वीराज, हमें तुम्हारी अतुल शक्ति पर विश्वास है। पुनश्च पड़ोसी राष्ट्रों से मित्रता का ही व्यवहार होना चाहिए। जब वे देखेंगे कि चौहानों की कीर्ति से विदेशी नतमस्तक हो गये हैं तो वे स्वतः झुक जायेंगे और अपने किये पर चार-चार आँसू

रोयेंगे। दैवगति प्रबल है, वत्स ! आर्यवर्त्त की आन्तरिक समस्याएँ विकट हैं। हमारा अभ्युदय न विदेशी देख रहे हैं और न हमारे आन्तरिक साथी ही। हमें परिश्रम में लगा रहना चाहिए। फिर भी हमारी उदारता सम्भव है ।

चन्द : उदारता, सम्भव है गुरुदेव, हमारे लिए घातक ही सिद्ध हो। जिस प्रकार व्यापारी की उदारता उसे दरिद्र बना देती है उसी प्रकार शत्रु के प्रति क्षत्रिय की उदारता उसे मृत्यु के मुख में धकेल सकती है। गुरुदेव, शत्रु चाहे देशीय हो चाहे बाहरी–शत्रु शत्रु है। राजतन्त्र का शत्रु हितैषी कब रहा है ! यदि उसमें कभी कोई परिवर्त्तन हुआ है तो स्वार्थवश। उसके अन्तर में स्वार्थ-भावना का स्रोत बहता रहता है। वह स्रोत जो सहसा अपना उग्र रूप धारण कर लेता है। अस्तु, हमें अपनी शक्ति पर आश्रित रहना चाहिये। किसी की दया पर राज्य जीवित नहीं रह सकते। हमारी आन्तरिक शक्ति समर्थ होगी तो हमारा अभ्युदय है, हमारे राष्ट्र का–आर्यावर्त्त का अभ्युदय है।

रामदास : फिर भी हमें अपने कर्त्तव्य के प्रति जागृत रहना चाहिए। अब बहुत विलम्ब हो चुका है, चलना चाहिए। होनी तो होकर रहती है।

[राजगुरु उठ खड़े होते हैं, उनके साथ ही अन्य सब। शनैः-शनैः सबका प्रस्थान]

[यवनिका]

दृश्य : तीन

स्थान : अन्हिलवाड़ पाटन के सम्राट गुर्ज्जरेश्वर भीमदेव के राज-प्रासाद का मंत्रणा-कक्ष ।

समय : मध्याह्नोपरान्त ।

[कक्ष-भवन की साज-सज्जा पूर्व दृश्य के ही समान है। गुर्ज्जरेश्वर के कक्ष-निर्माण में प्राय: काष्ठ का प्रयोग अधिक हुआ है। भवन में इधर-उधर कुछ प्रतिहारियाँ ही दिखाई पड़ रही हैं, जो कक्ष की आवश्यक व्यवस्था में लगी हुई हैं। सहसा गुर्ज्जरेश्वर भीमदेव अपने कुछ विश्वस्त सामन्तों के साथ पधारकर अपने-अपने आसनों पर विराजते हैं।]

भीमदेव : सुना जयसिंह ! चौहान गुर्ज्जर-मण्डल में भी अपनी जय-जयकार कराना चाहते हैं। कुछ ही दिनों की बात है, पृथ्वीराज अपने सैनिकों के साथ हमारी सीमा में प्रवेश कर लूट-पाट करना चाहते थे।

जयसिंह : यह पृथ्वीराज का साहस नहीं है, श्रीमान् ! चौहान गुर्ज्जर से संघर्ष लेना उचित नहीं समझेंगे। उन्हें भली-भाँति ज्ञात है कि हमारे पास अतुल शक्ति है, असंख्य शस्त्रास्त्रों का भण्डार है। हमारे मित्र सोरठ और सिन्धु देश के नरेशों ने पाटन के शस्त्रागार को नवीन और अमोघ अस्त्रों से भर दिया है।

भीमदेव : फिर उनका दुस्साहस ही है, जयसिंह !

जयसिंह : दुस्साहस कैसा श्रीमान् ! काका सारंगदेव के पुत्र उनका उत्साह बढ़ाते रहते हैं।

भीमदेव : हमारे काका के पुत्र, प्रतापसिंह, अमरसिंह ! वे तो सिन्धु सीमा पर उपद्रव मचाते रहे हैं।

[सारंगदेव का प्रवेश]

पधारिये काका जी ! बहुत दिनों बाद आना हुआ।

सारंगदेव : सिन्धु-सीमा की ओर चला गया था। वहाँ का उत्पात शान्त करना था।

भीमदेव : (**शंकापूर्ण दृष्टि से**) सिन्धु-सीमा प्रदेश की ओर ! सुना है वहाँ अब प्रतापसिह का उपद्रव नहीं रहा।

सारंगदेव : इसीलिए गया था, श्रीमान् !

भीमदेव : अब यह उपद्रवी अपने सातों अनुजों के साथ चौहानों की सीमा पर पहुँच गया है। (**सावेश**) यह सत्य है कि प्रतापसिह का सहारा पाकर ही चौहान सैनिक हमारी सीमा में घुस आया करते हैं।

सारंगदेव : (**सविनय**) यह असत्य है, श्रीमान् ! मैने उन्हें समझा दिया है, वे भविष्य में अब हमारी सीमा पर उपद्रव नहीं करेंगे और न पाटन-नरेश की सीमा में ही घुसेंगे।

भीमदेव : अभी पिछली घटना में ही उन्होंने चौहानों का साथ दिया है।

सारंगदेव : (**साश्चर्य**) चौहानों का साथ ! मै उनसे वचन लेकर आया हूँ, वे कदापि इस ओर नही आवेंगे।

[गुप्तचर का प्रवेश]

गुप्तचर : गुर्ज्जरेश्वर की जय हो !

जयसिंह : (**आँख का संकेत करके**) कहो गुप्तचर निर्भय होकर कहो। चौहान-सीमा-प्रदेश पर कोई गड़बड़ तो नही हुई !

गुप्तचर : अभय मिले सम्राट !

भीमदेव : दिया।

गुप्तचर : हमारी सीमा में लगभग बत्तीस सैनिकों के शव मिले हैं।

उनके संस्कार की व्यवस्था (झिझक प्रकट करते हुए)···उनकी व्यवस्था···करनी है।

भीमदेव : (सरोष) सुन रहे हैं काका जी, बत्तीस सैनिकों की हत्या कर दी गई है। सिन्धु-सीमा पर शान्ति हुई तो अब इधर आए दिन उत्पात सुन रहे हैं।

सारंगदेव : श्रीमान्, इसमें कोई रहस्य है।

भीमदेव : (सदर्प) रहस्य! रहस्य क्या होगा? हमारे गुप्तचर सच्चे समाचार ही देते हैं। क्यों, चन्दन सच-सच बता!

गुप्तचर : (भयभीत होकर) सम्राट् की जय हो···जो···जो निवेदन कि···या है, वह सच है।

सारंगदेव : (सदर्प) और झूठ निकला तो···तो तुझे मृत्यु-दण्ड दिया जायगा।

गुप्तचर : अ···भय···अभय मिले सम्राट्! काका जी, अभय मिले। सीमा-रक्षक के एक अधिकारी ने कहा था।

सारंगदेव : (सरोष) क्या कहा था? यही न कि झूठ बोलकर घर में ही आग लगा देना चन्दन! सच बता तूने देखा था—वे शव गुर्ज्जर सैनिकों के थे?

गुप्तचर : नहीं काका जी, मैंने अपनी आँखों से तो नहीं देखा।

सारंगदेव : शव भी नहीं देखे?

गुप्तचर : नहीं अन्नदाता, क्षमा, मेरा यह पहला ही अपराध है।

सारंगदेव : हो सकता है शव हों ही नहीं।

गुप्तचर : (भयपूर्वक) हो सकता है, स्वामी!

सारंगदेव : देखा श्रीमान्, तिल का ताड़ बना दिया गया। न धुआँ, न लपट, न चिनगारी, फिर भी आग-आग चिल्लाया जा रहा है। श्रीमान् विश्वास करें, चौहान हमसे जूझना उचित नहीं समझते।

वे तो आर्यभूमि की रक्षा करना चाहते हैं। आर्यवर्त्त पर विदेशी सत्ता पैर न फैलाए यही उनका मुख्य लक्ष्य है। उन्हें गुर्ज्जर-शक्ति से भय भी नही है।

भीमदेव : (**तरेरकर**) क्यो होगा ! घर के भेदी जब उनसे मिल गए है। (**सदर्प**) जाओ चन्दन ! (**चन्दन का प्रस्थान तथा दूसरे गुप्तचर का प्रवेश**)

गुप्तचर : (**नतमस्तक**) गुर्ज्जरेश्वर की जय हो !

सारंगदेव . चौहान-नरेशों ने इस प्रकार की दूषित नीति का सहारा कभी नही लिया श्रीमान् !

भीमदेव : तब गुर्ज्जर-नरेशों ने लिया है, क्यों ?

सारंगदेव : श्रीमान् ?

भीमदेव : कहो जीवत क्या समाचार लाये ! अजयमेरु में कोई नवीन समाचार मिला ?

गुप्तचर : अभय मिले प्रभु !

भीमदेव : दिया ! किन्तु जो कुछ कहना है सत्य कहना।

गुप्तचर : (**नतमस्तक**) देव सच ही निवेदन करूँगा ! अमात्य श्री जयसिह ने मुझे अजयमेरु भेजा था, यह पता लगाने कि युवराज श्री प्रतापसिंह अजयमेरु पहुँचकर क्या करते है, कहाँ ठहरते हैं, आदि-आदि।

जयसिह : सच सच बताओ वे लोग कहाँ चले गये ?

गुप्तचर : चौहान-सम्राट ने उन्हें राज-आश्रय दिया है।

जयसिह : नरवर भील भी तो वहाँ गया था ?

गुप्तचर : वह वही रुक गया है। मैं यह समाचार लेकर चला आया हूँ।

भीमदेव : सुन रहे हैं काका जी, पृथ्वीराज की शरण गए हैं आपके पुत्र।

गुप्तचर : पृथ्वीराज ने उनकी आवभगत बड़ी धूम-धाम से की। नृत्य और संगीत की वहसु मधुर स्वरलहरी चली कि किन्नरियाँ तक......।

भीमदेव : (सहर्ष) किन्नरियाँ अरे ! नृत्य ! किन्नरियाँ ! जयसिंह हमारी किन्नरी...इच्छनकुमारी का समाचार लेने कौन गया था ? अमरसिंह सेवरा...जैन !

जयसिंह : हाँ श्रीमान्, अब तक आ जाना चाहिए था।

भीमदेव : काका सारंगदेव के पुत्रों ने हमारा मस्तक झुका दिया है। हमारे भाइयों ने ही पाटन के प्रति विद्रोह का झंडा उठाया है। (सरोष) प्रतापसिंह ने उद्दण्डता धारण कर ली है। पाटन की सम्पदा लूट-लूट कर अब अजयमेरु के कोष में भरी जायगी। लुटेरे लूटेंगे और...और पाटन की प्रजा इसी प्रकार लूटी जाती रहेगी।

जयसिंह : अपराध क्षमा हो देव ! प्रतापसिंह आदि को विद्रोही घोषित कर दिया जाय। सम्भव है तब पृथ्वीराज उन्हें अपने यहाँ आश्रय न दे सकेंगे।

भीमदेव : जयसिंह, तुम्हारी बुद्धि प्रखर है। किन्तु सोचना होगा, यदि फिर भी पृथ्वीराज ने उन्हें अपने आश्रय से दूर नहीं किया तब ! तब क्या होगा ? हमारी प्रतिष्ठा पर अधिक आघात पहुँचेगा।

जयसिंह : चौहानों में इतना साहस नहीं कि वे पाटनधनी के विद्रोहियों को अपनी परिषद् में स्थान दिये रहें।

भीमदेव : काका जी, इस सम्बन्ध में आपकी क्या सम्मति है, हम

किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो उठे हैं।

सारंगदेव : (सखेद) ऐसे पुत्रों से निस्सन्तान रहता तो अच्छा था। मूर्खों ने शरण भी ली तो चालुक्यों के प्रतिद्वन्द्वी की। जो लोग अपने देश और राष्ट्र-नीति से संघर्ष लेते हैं वे निस्सन्देह विद्रोही कहे जायेंगे।

भीमदेव : (सदर्प) ऐसे नराधम विद्रोहियों को भीमदेव उचित दण्ड देना जानता है। सोलंकी प्रयत्नशील है; एक बार पृथ्वीराज को किसी बहाने यहाँ बुला लें और सारा भुगतान करवा लें।

[**राणकराव का प्रवेश**]

जयसिंह : पधारिये राणकराव, पधारिये।

राणकराव : चालुक्यराज की जय हो!

भीमदेव : राणकराव! कहाँ से पधार रहे हैं?

राणकराव : भीनमाल गया था।

भीमदेव : (प्रसन्नतापूर्वक) जयतसिंह परमार के क्या हाल हैं?

राणकराव : जयतसिंह परमार अपनी दूसरी कन्या का विवाह-संस्कार करना चाहते हैं।

भीमदेव : (सहर्ष) तब उन्होंने हमारा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। हमने अमात्य अमरसिंह सेवरा को भेजा था।

राणकराव : अमरसिंह जैन श्रीमान्! वह तो मेरे सामने नहीं पहुँच पाये थे। मुझे चले छठा दिन है।

जयसिंह : अमरसिंह सेवरा जैन अवश्य सफल होंगे श्रीमान्!

भीमदेव : ऐसा ही जयसिंह! तुम्हें विश्वास है और हमें भी। किन्तु राजरानी मन्दोदरी कह रही थी कि पिताजी इच्छन का विवाह चौहाननरेश पृथ्वीराज से करना चाहते हैं। इच्छन कुमारी भी पाटन के स्थान पर अजयमेरु जाना चाहती थी। पृथ्वीराज

के रूप-गुणों पर उसकी अनुरक्ति है। परन्तु राणकराव, हम उस सुन्दरी को अपने यहाँ लाना चाहते हैं।

जयसिंह : पाटन का वैभव कम नहीं है, श्रीमान् ! उसके गौरव के गीत उत्तर में, पश्चिम में, पूर्व में और दक्षिण में गाये जाते रहे हैं।

भीमदेव : और यह भी कहो कि भीम के बाद भी गाये जाते रहेंगे। जयतसिंह ने जब हमारा प्रस्ताव सुना होगा तो वहाँ नवोत्साह जाग उठा होगा।

सारंगदेव : भ्रम में हैं, श्रीमान् ! परमार सुनकर आग-बबूला हो गये होंगे।

भीमदेव : (सरोष) काका जी, आप भ्रम में हैं। पुत्रों के वियोग में मति खो बैठे हैं।

सारंगदेव : श्रीमान् को इच्छन कुमारी के मोह ने···।

भीमदेव : (सदर्प) काका जी ! हम आपका सम्मान करते हैं।

राणकराव : (सविनय) उत्तेजित न हों श्रीमान्। काका जी स्वयं दुविधा में फँस चुके हैं। उनके प्रति सहानुभूति होनी चाहिए। पुत्रों के क्रिया-कलापों से वे क्षुब्ध रहते हैं।

भीमदेव : राणकराव काका जी ने हमारे प्रस्ताव का सदैव विरोध किया है।

सारंगदेव : विरोध न समझें श्रीमान् ! परमार चौहान-शिरोमणि पृथ्वीराज को अपनी कन्या देना बहुत पहले ही स्वीकार कर चुके हैं।

जयसिंह : यदि यह विवाह हो जाय तो राजनैतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण रहेगा। चालुक्य और चौहान एक-दूसरे के प्रतिद्वन्दी हैं। यदि इच्छन कुमारी इधर आ जाती हैं तो वह संघर्ष समाप्त

हो जायगा।

सारंगदेव : समाप्त नहीं हो जायगा अमात्य जयसिंह, वह आग भड़केगी···वह आग भड़केगी कि······

भीमदेव : कहो ना···यह कहो कि उस आग में चौहनों की कीर्ति, उनकी शक्ति भस्म हो जायगी।

सारंगदेव : मुझसे न कहलाओ चालुक्य राजा ! इसे भविष्य बतलायेगा।

राणकराव : श्रीमान्, यह तो मैंने भी अनुभव किया था कि परमार का झुकाव उस ओर ही अधिक है।

भीमदेव : इसका कारण ?

राणकराव : कारण जानना चाहते हे श्रीमान् ? वह तो अमरसिंह सेवरा अधिक स्पष्ट कर सकेंगे।

[**सहसा अमरसिंह सेवरा का सवेग प्रवेश**]

भीमदेव : आ गये अमात्यशिरोमणि ! सफलता मिली ?

अमरसिंह :······(**निरुत्तर अपना मस्तक नीचे किये हुए**)

जयसिंह : अमात्यराज ! आपकी ही चर्चा चल रही थी। कहिये क्या हुआ ?

अमरसिंह : परमार मेरे पहुँचने से पूर्व ही श्रीफल अजयमेरु भेज चुके थे।

भीमदेव : अमरसिंह ! (**सदर्प**) श्रीफल ही तो भेजा था, इच्छन कुमारी तो वहीं थीं। राजमहिषी से मिलाने के बहाने ही लिवा लाते, अपनी भगिनी से मिलने चली आती वह।

अमरसिंह : मैंने बहुत समझाया किन्तु परमार की बुद्धि में एक भी बात न उतरी।

भीमदेव : (**सरोष**) हम उतारेंगे उनकी बुद्धि में। मतिभ्रष्ट हो गई

है परमार की।

जयसिंह : यदि यह सम्बन्ध हो जाता तो हम भीनमाल में अपनी शक्ति, अपने सैनिक-शिविर स्थापित कर लेते। चौहान तथा प्रतापसिंह के कुचक्रों पर दृष्टि बनी रहती।

भीमदेव : हम बलपूर्वक इच्छन कुमारी को लायेंगे। चौहानों की इच्छा-आशाओं पर पानी पड़ जायगा।

सारंगदेव : अपराध क्षमा हो श्रीमान्! चौहान इच्छन कुमारी से विवाह के लिये इच्छुक नहीं हैं।

भीमदेव : (**सरोष**) तब कौन इच्छुक है?

सारंगदेव : यह प्रस्ताव स्वयं परमार ने रखा है। इच्छन की उसमें स्वीकृति है श्रीमान्!

भीमदेव : परमार का प्रस्ताव ··· (**सदर्प**) ··· इच्छन की स्वीकृति! हम दोनों को समझेंगे। हम शक्ति का प्रयोग कर परमार को मिटा देंगे। इच्छन को लाकर अपने प्रासाद की दीवारों में रख देंगे।

सारंगदेव : तब इससे न चालुक्यधनी सुखी होंगे और न महिषी इच्छन। इस बलात् विवाह से सम्राट भीमदेव अपनी नींद न सो सकेंगे।

भीमदेव : (**सरोष**) हमें सोना नहीं है।

सारंगदेव : अपनी नींद जाग भी न सकेंगे श्रीमान्! आपकी सुख-शान्ति रूठ जायगी देव!

भीमदेव : काका जी, हमें आपका उपदेश कटु प्रतीत हो रहा है। आप मौन रहें तो ठीक होगा। जयसिंह, हमें इच्छन को लाना है।

जयसिंह : अमरसिंह सेवरा एक बार पुन: वहाँ जायँ और परमार पर टूटने वाले पहाड़ की ओर परमार का ध्यान दिला दें।

अमरसिंह : सब दाँव-पेच खेल आया हूँ, श्रीमान्! सेवक ने अपनी करनी में कसर नहीं छोड़ी है।

भीमदेव : तब युद्ध ही अन्तिम अस्त्र होगा। युद्ध ! केवल युद्ध !

सारंगदेव : एक लड़की के लिये युद्ध ! श्रीमान्, असंख्य वीरों का रक्त-पात होगा। एक परमारकन्या के लिये अनेक गुर्ज्जरनारियाँ वैधव्य की वेदना भोगेंगी। कितनी ही माताएँ अपने पुत्रों से वंचित हो जायँगी, कितने बच्चे अनाथ हो जायँगे। और ये हो भी जायँ, होते भी हैं किन्तु एक लड़की को पाने के लिये ? यदि परमार वीर-गति को प्राप्त हुए तो राजमहिषी मन्दोदरी अपने पिता, अपने भाई के सुख से वंचित न हो जायेंगी ? उनकी आँखों में पानी बहता देखेंगे श्रीमान्। जिस सुख-वैभव में राजनन्दिनी अठखेलियाँ कर रही हैं उसमें बाधा खड़ी कर देना चाहते हैं श्रीमान्।

भीमदेव : अमरसिंह ! मन्दोदरी तो हमारे सुख में सुखी रह सकेंगी। हमारी पीड़ा से वह पीड़ित हो जायेंगी।

सारंगदेव : परमार को चौहानों की शक्ति मिल जायगी। वैसे स्वयं परमार भी शक्ति-शून्य नहीं हैं। श्रीमान् ने स्वप्न में सत्य की कल्पना कर ली है। अच्छा उस स्वप्न को भूल जायें। पृथ्वीराज अतुल पराक्रमी है और उनके साथ··· ।

भीमदेव : काका जी ! **(सरोष)** यह बतलाना चाहते हैं कि पृथ्वीराज के साथ प्रतापसिंह भी हैं।

सारंगदेव : श्रीमान् ! **(उत्तेजित होकर)** दुर्भावना न बनावें। प्रतापसिंह आदि आठों पुत्रों को चालुक्यराज के बन्दीगृह में लाकर पटक दूंगा।

राणकराव : काका जी, उत्तेजित न हों। आप जानते हैं श्रीमान्, चालुक्यराज जो चाहते हैं उसके पीछे पड़ जाते हैं। श्रीमान् के स्वभाव से परिचित हैं आप।

सारंगदेव : मैं तो पाटन के हित के लिये कह रहा हूँ। पाटन की कीर्ति-कौमुदी पर राहू लगना चाहता है।

भीमदेव : उस राहू को खण्डित करने की शक्ति चालुक्य की कृपाण में है। देख रहे हैं हमारे सामने हमारे शत्रु के गीत गाये जा रहे हैं ? स्मरण रहे पृथ्वीराज हमारा शत्रु है।

सारंगदेव : (**सविनय**) कौन किसका शत्रु है श्रीमान्, शान्त मन से विचारें। क्रोध के आवेश में मित्र की सलाह भी कटु लगती है।

भीमदेव : आपके पुत्र वहाँ हैं। आपको भय है कि कहीं चौहान युद्ध-क्षेत्र में उन्हें हमारे सामने खड़ा न कर दें। वे समझते होंगे कि चालुक्य-पुत्रों को सामने देखकर हम पराजय स्वीकार कर लेंगे। वे हमारे हाथ से, चालुक्य चालुक्य के हाथ से मारे जायँ तो हमें दुःख न होगा। काका जी, यह आपका ही कुचक्र मालूम होता है। प्रतापसिंह को हमसे द्वन्द्व लेने आपने ही उन्हें वहाँ भेज दिया है।

सारंगदेव : (**सदर्प**) श्रीमान् ! यह आरोप सारंग सोलंकी सहन न कर सकेगा। यदि सारंग ने इसमें सहयोग दिया होता, जिसे श्रीमान् कुचक्र मान रहे हैं, यदि उसमें मेरा समर्थन होता तो उनकी दशा दयनीय न हो जाती। उत्तराधिकार के समय जो षड्यन्त्र पाटन के कुछ लोगों ने खड़ा कर दिया था, यदि उसमें सारंग ने अपना योग दिया होता तो··· ।

भीमदेव : काका जी ने न्याय का पक्ष लिया। सबके सब षड्यन्त्रकारी पाटन की सीमा से बाहर कर दिये गये। भीम के हाथ में भी कृपाण थी। उसकी सोरठी धार का पानी···

सारंगदेव : सोरठी कृपाण का पानी ! सारंग ने श्रीमान् को इस कलंक से बचा लिया कि एक भाई अपने भाइयों के रक्त में अपने हाथ न रँगे। भाई-भाई के काम आवे किन्तु श्रीमान्, उन्होंने जो भूल

की उसका दण्ड मृत्यु-दण्ड भी हो सकता था। किन्तु उनका दोष प्रमाणित न हो सका। जो षड्यन्त्र रचा गया था उसमें स्पष्ट रूप से उनका हाथ न था। उनके समर्थकों ने अपनी इच्छा से ही किया था। अस्तु, वे बच गये। श्रीमान्। चालुक्यराज का न्याय अन्धा नहीं है। इसे सब जानते हैं।

भीमदेव : वह बीती कहानी है, वर्त्तमान में जो हो रहा है उसे भी देखो। प्रतापसिंह हमसे लड़ने आवेंगे। क्यों न आवें, चौहान पृथ्वीराज ने शरण जो दी है।

जयसिंह : चालुक्यधनी ! अपराध क्षमा हो। पाटन के नक्षत्र विपरीत हो रहे हैं।

सारंगदेव : जयसिंह, वाणी पर संयम रखना सीखो। पाटन के विपरीत नक्षत्र तो आप जैसे मंत्रीगण ला रहे हैं। चाटुकारी मंत्री अपने राजा को उचित और सन्मार्ग पर चलने ही नहीं देते।

जयसिंह : (**सावेश**) काका जी ! हमने आपका सम्मान रखा है। हमें अपना मुँह खोलने के लिये विवश न करें।

सारंगदेव : देख रहा हूँ, तुम्हारा मुँह बहुत पहले ही खुल चुका है। तुमने कई बार संकेत किया है कि सारंगदेव कुचक्री है। सारंगदेव कुचक्री होता तो…।

भीमदेव : (**सदर्प**) काका जी ! काका जी ! यदि आप कुचक्रों में सम्मलित होते तब क्या पाटन के सिंहासन की नींव हिल जाती ! पाटन का साम्राज्य बिखर जाता !

सारंगदेव : (**सरोष**) सम्भव था। पुत्रों के प्रति ममता और मेरे कुचक्र पाटन के सिंहासन पर आधिपत्य कर सकते थे। पाटन के सिंहासन पर प्रतापसिंह भी बैठ सकता था और सारंग भी। किन्तु सारंग ने अनर्थ न होने दिया। गुर्ज्जरेश्वर, भूलें नहीं कि सारंग

के रक्त ने, सारंग की वीरता ने, सारंग के अदम्य साहस ने पाटन की कीर्ति, पाटन की सीमा की रक्षा की है। किसके बाहुबल ने इस सिंहासन को अक्षुण्ण रखा है ! सारंग के बाहुबल पर चालुक्यों को गर्व रहा है। किन्तु देख रहा हूँ, जिस नींव के पत्थर पर विशाल भवन खड़े किये जाते हैं उसे कोई नहीं देखता। ऊपर की भव्यता ही दृष्टिगोचर होती है। बेचारे नींव के पत्थर ! ··· नींव के पत्थर ! ··· नींव के पत्थर !

भीमदेव : और कुछ कहना चाहते हो काका जी ?

सारंगदेव : कहना तो कुछ नहीं चाहता था किन्तु श्रीमान् के इस चाटुकारी मंत्री ने मुझे बाध्य कर दिया··· और अब केवल इतना कहना चाहता हूँ··· केवल यह···पाटनधनी की (**सरोष**) यदि इन पुरानी अस्थियों पर अविश्वास के अंकुर दिखाई देने लगे हैं तो यह देह श्रीमान् का आदेश बजा लाने को प्रस्तुत है। यदि इस देह से गुर्ज्जरेश्वर खेलना चाहते हैं तो यह देह सामने खड़ी है। (**अपनी कृपाण पटककर**) इसे कुत्तों के सामने पटक दो, भूखे सिंहों के पिंजरे में डलवा दो, हाथ-पैर बाँधकर जंगल में डलवा दो ताकि चील-कौवे, सिंह, पक्षी इससे अपनी उदर-पूर्ति करें। चालुक्य सारंग पर अविश्वास···अविश्वास !

[**धम्म से गिर पड़ता है**]

भीमदेव : काका जी ! काका जी !

सारंगदेव : वत्स भीमदेव। चालुक्यधनी ! (**अश्रुपूरित नेत्र**) आज आपके सम्मुख मेरे बूढ़े हाड़-माँस पर आरोप लगाया गया है। पुत्रों का मोह होता है वत्स ! किन्तु मैंने सारी ममता भीमदेव में उँडेल दी है। प्रत्येक पिता अपनी सम्पत्ति के सुख-वैभव का अभिलाषी होता है, उसकी निरंकुशता का समर्थक नहीं। दस्यु

भले ही उसके समर्थक बन जायं, क्षत्रिय नहीं।

भीमदेव : काका जी, आप विश्राम करें। (**उच्च स्वर**) प्रतिहारी··· प्रतिहारी··· !

[**प्रतिहारी का प्रवेश**]

काका जी को विश्राम की आवश्यकता है।

प्रतिहारी : आज्ञा नाथ।

[**प्रतिहारी का आश्रय लेकर सारंगदेव का प्रस्थान**]

भीमदेव : अमरसिंह ! इच्छनकुमारी ने पृथ्वीराज को विवाह-निमंत्रण दिया है और भीमदेव उसे रण-निमंत्रण देगा। (**सावेश**) अमरसिंह, आप गुर्ज्जर भूमि की प्रतिष्ठा स्थिर न रख सके। जयतसिंह परमार में इतना साहस कि वह गुर्ज्जरेश्वर की इच्छा के साथ खेलवाड़ करे ! हम अनुभव करते हैं अमात्य-धर्म का पालन न हो सका आपसे।

अमरसिंह : अपराध क्षमा हो देव ! सेवक ने जयतसिंह को अनथक समझाया। ऊँच-नीच, कल्पित-अकल्पित भयों की ओर भी ध्यान आकर्षित किया किन्तु सलखकुमार ने कृपाण निकालकर द्वन्द्व के लिये ललकारा।

भीमदेव : और अमरसिंह उस ललकार को पी गये ?

अमरसिंह : नहीं पृथ्वीनाथ ! मैंने भी सपनी सोरठी कृपाण निकाल ली किन्तु जयतसिंह ने कहा--'अमरसिंह हमारे शत्रु नहीं हे, प्रत्युत् एक दूत का कार्य सम्पादन करने आये हैं। दूत अवध्य होता है।" अस्तु, संघर्ष की घड़ी आई ही नहीं, अन्यथा अमरसिंह की सोरठी का पानी वह स्मरण रखता।

राणकराव : अमात्यराज ने किन शब्दों में इच्छनी की माँग की थी, सुनें तो !

अमरसिंह : श्रीमान्, सेवक ने कहा था कि अभी कुछ नहीं बिगड़ा है। यदि चालुक्यराज के कोप-भाजन से बचना चाहते हो तो इच्छनी का संस्कार महाबली चालुक्य-शिरोमणि भीम से कर दो। बड़ी बहन के साथ-साथ छोटी बहन भी सुख-ऐश्वर्य का भोग भोगेगी।

भीमदेव—(**सरोष**) इस पर जयत ने क्या कहा ?

अमरसिंह—परमार ने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया कि जब स्वयं इच्छनी ने पृथ्वीराज को वरण का संकल्प लिया है तो मैं विवश हूँ। यदि चालुक्यराज ने मेरे राज्य की सीमाएँ अपने राज्य में मिलाना अभीष्ट समझा होता तो मैं सहर्ष दे देता, मेरे प्राण माँगे होते तो उन्हें विसर्जन करने में भी संकोच न करता, किन्तु चालुक्य-शिरोमणि ने हमारी प्रतिष्ठा पर आघात किया है। उसे हम किसी भी मूल्य पर देने को प्रस्तुत नहीं हैं।

भीमदेव : (**सरोष**) और भी कुछ कहा था उस नराधम ने ?

अमरसिंह : कहा प्रभु ! जयतसिह के वाक्-वाण मेरे कानों मे अब भी गूंज रहे हैं।

भीमदेव : (**सरोष**) शत्रु की विरुदावलि मत गाओ। कहो उस नीच पामर ने गुर्ज्जर-अमात्य को किस भाँति अपमानित किया ?

अमरसिंह : श्रीदेव, अभय मिले। परमार ने हमारी शक्ति को चुनौती दी है। उसने कहा है, परमार को सोरठ और सिन्धु के शासक मत समझना। हम चालुक्यराज का इसीलिये सम्मान करते हैं कि वे हमारे जामाता हैं, किन्तु जब हमें युद्ध के लिये ललकारा गया है तो परमार भी शक्ति का उत्तर शक्ति से ही देगा। यदि उसके समर्थ हाथों में अभी शक्ति विद्यमान है तो हम अर्बुद के शस्त्रास्त्रों से उसका सत्कार करेंगे।

जयसिंह : और सलख ने कुछ नहीं कहा ?

अमरसिंह : सलख ने भी कहा था श्रीमान् ! कि क्षत्रिय-बाला जिसे मन-वचन से वरण कर लेती है वह उसी की हो जाती है। इच्छन-कुमारी हमारे यहाँ चौहान-भूषण पृथ्वीराज की धरोहर है, उस धरोहर की रक्षा हम अपना सर्वस्व देकर भी करेंगे।

भीमदेव : (**सक्रोध**) शावक सिंह के दाँत गिनना चाहता है ! बौना आकाश को छूने की धृष्टता करता है ! हम उसे भी पाठ पढ़ायेंगे। अमरसिंह, हम परमार पर विजय प्राप्त कर इच्छनी को अपने रम्य प्रासाद में ले आयेंगे। चालुक्य-सम्राट् का अपमान करने वाले उस नारकीय का दुस्साहस सहन नहीं किया जा सकता।

जयसिंह : परमार ने श्री भीमदेव का ही अपमान नहीं किया है। उसके निर्णय ने तो गुर्जर-मण्डल, गुर्जर-साम्राज्य के मुख पर घूंसा मारा है। हमारी शक्ति परमार के राज्य को छिन्न-भिन्न कर देगी।

भीमदेव : राणक देव ! आप युद्ध के लिये उद्यत होइए। चतुरंगिणी सेना से हम परमार वंश को इस पृथ्वी पर से मिटा देंगे। जयसिंह, मंत्रिवर वाचिगदेव को सूचना भिजवा दो, संघर्ष की बेला आ पहुँची है। सोरठ, कच्छ तथा नर्मदा तटवर्ती हमारे माण्डलिकों को एकत्रित करो। हम सब मिलकर भीनमाल में प्रलय खड़ी कर देंगे। (**दाँत पीसते हुए**) युद्ध···युद्ध··· इच्छनकुमारी के लिए युद्ध ही करना पड़ेगा। इच्छनकुमारी के बिना प्रासाद हमें शून्य दिखाई दे रहा है। हम उसे पाकर ही रहेंगे।

[**भीमदेव आदि सब उठ खड़े होते हैं**]

[**यवनिका**]

दृश्य : चार

स्थान : अजयमेरु-स्थित सम्राट पृथ्वीराज चौहान
की राज-परिषद् ।

समय : मध्याह्नोपरान्त ।

[परिषद्-भवन सुसज्जित है । स्वर्ण-सिंहासन के दोनों ओर चमर-वाहनियाँ चमर लिये सम्राट के पधारने की प्रतीक्षा कर रही हैं । सिंहासन के पीछे स्वर्ण-निर्मित सूर्य चमक रहा है । सूर्य की आँखों तथा मुख में मणियाँ लगी हुई हैं जिनसे प्रकाश फैल रहा है । सम्मुख नीचे भाग में चन्द्राकार आसन हैं जिन पर परिषद् के सभासद बैठते हैं । भवन के प्रांगण पर बिछावन बिछा हुआ है । कक्ष-द्वार पर दोनों ओर दो प्रहरी सूर्यदण्ड उठाये खड़े हैं । सिंहासन के पीछे दाईं ओर गुरु राम-दास का आसन है । वे गम्भीर मुद्रा में वहाँ विराजे हुए हैं । प्रत्येक परिषद्-जन आ-आ कर अपने-अपने आसन पर बैठता है । सहसा नेपथ्य में शंख-ध्वनि होती है । परिषद्-जन उठकर विनयावनत होते हैं । शंख-ध्वनि के अन्तिम स्वर समाप्त होते-होते सम्राट पृथ्वीराज पधारते हैं । उनके दोनों ओर चमर तथा छत्र धारण किये सेविकायें आती हैं । सम्राट के सिंहासन के समीप पहुँचकर परिषद्-भवन से बाहर हो जाती हैं । सम्राट के सिंहासन पर बैठने के पश्चात् अन्य लोग बैठते हैं । दो चारण आकर सिंहासन के दोनों ओर खड़े होकर स्तुति-पाठ करते हैं ।]

प्रथम चारण : जग में ससि-रवि राज करें, अरु हिमगिरि छाजें ।
जबलौं सुरसरिधार बहै, नभ में घन गाजें ।
तबलौं शत्रु-नर-नारि, नयन जलधार बहावें ।
बैरिन के दल नित्त, दन्त-बिच घास दबावें ।

युग-युग भारत मधि रहै, पाप-ताप को सतत छय।
कंठ-कंठ सौं रव उठैं, जय-जय पृथ्वीराज जय ।।

द्वितीय चारण: चपलासम करबाल समर में है आलोकित।
रण-रस-मत्त प्रचण्ड सत्रु सिर हौं भू-लुण्ठित।
तब जस-राका-जोति, जगमगै तिहु लोकन में।
मोहक मन्मथ रूप बसै, मृगनैननि मन में।
छीन लच्छिमी जलधि सौं, निसदिन तू भोग करि।
तो सम पृथ्वीराज कित, बैरिण भालजन सोक हरि ।।

[दोनों चारण अभिवादन-सूचक अपने मस्तक झुकाते हैं। परम्परानुसार प्रधान अमात्य कैमास स्वर्ण-मुद्राएँ पुरस्कार में देते हैं। एक बार पुनः चारण सम्राट को मस्तक झुकाकर अभिवादन करते हैं, तदनन्तर परिषद्-जनों के सम्मुख नतमस्तक होकर प्रस्थान करते हैं।]

चन्द : (खड़े होकर) कविवाणी में कितनी सजीवता है ! आर्य्य-सम्राट की प्रशस्ति मे गाये जाने वाले ये छप्पय जिस कवि की वाणी से स्रवित हुए हैं वे कवि धन्य हैं।

रामदास : कविराज चन्द ! परम्परायें उत्साह-वर्द्धक होती हैं। यह विरुदावलि सर्वप्रथम आर्य्य-सम्राट विग्रहराज-विशालदेव की परिषद् में गाई गई थी।

कान्हदेव : कविराज की वाणी से भी कुछ सुनना चाहेगी परिषद्। उस परम्परा में कवि की सरस्वती चार चाँद लगा देगी।

चन्द : काका जी, कवि चन्द की गाई जाने वाली विरुदावलि अपूर्व होगी। चौहान-नरेन्द्रों की अमर-गाथा जब कवि चन्द की सरस्वती गायेगी तो वह युग-युगान्तर तक ही नहीं, जब तक आकाश

में सूर्य और चन्द्रमा उपस्थित रहेंगे, भागीरथी के निर्मल स्रोत के समान जन-जन में प्रवाहित होती रहेगी । काव्य-जगत में एक नया मोड़ आयेगा । सम्राट की गौरव-गाथा···किन्तु अभी समय है । काका जी, अभी वह दिन दूर है ।

[**बैठते हैं**]

प्रतापसिंह : (**खड़े होकर**) वीरों के विरुद गाये जाते हैं तो रोम-रोम फड़क उठता है । एक नवीन उत्साह जागृत होता है । ऐसी विरुदावलियाँ हमने चालुक्य-परिषद् में भी सुनी थीं ।

[**बैठते हैं**]

कान्हदेव : (**सदर्प**) प्रतापसिंह चालुक्य ! चालुक्य भीमदेव ने ऐसे सुयोगों में भाग लेने से वंचित कर दिया है । फिर भी चालुक्य-परिषद् की याद उठ रही है ।

प्रतापसिंह : (**खड़े होकर**) हमने सहज स्वभाव से ही कहा है काका जी, कोई कटु-उक्ति नहीं की ।

[**बैठते हैं**]

कान्हदेव : हमें चौहान-परिषद् की मर्यादा देखनी चाहिए । इस परिषद् में अन्य राज्यों की प्रशस्तियों से क्या प्रयोजन ! आर्य्य-सम्राट विग्रहराज विशालदेव, परम प्रतापी स्वर्गीय सोमेश्वरराज ने सपादलक्ष में ही नहीं समस्त आर्य्य-भूमि में चौहानों का जय-जयकार करवाया है । सम्राट विग्रहराज ने म्लेच्छ आततताइयों को भारत की पुण्य-भूमि से बाहर निकाल दिया था । भारत के अन्य नरेश विदेशी शत्रु को भारत से बाहर न निकाल सके ।···

प्रतापसिंह : (**खड़े होकर**) अपराध क्षमा हो सम्राट ! किस युग की कहानी सुनाई जा रही है ? काका कान्हदेव वयोवृद्ध हैं···ज्ञान-

वृद्ध भी। भारत-भूमि सदैव पद-दलित की जाती रही है। आक्रमणकारियों ने पराजय भी देखी है। भारत-भूमि में सिकन्दर की पराजय भारत के इतिहास में अंकित हो चुकी है।

कान्हदेव : सम्भवतः चालुक्यों ने उसमें योग दिया होगा।

[**सब हँस पड़ते हैं**]

प्रतापसिंह : चालुक्यों का प्रताप ऐसा ही है। चालुक्य-युग गौरव-पूर्ण रहा है।

[**बैठते हैं**]

कान्हदेव : प्रतापसिंह ! हम मध्ययुग की चर्चा कर रहे हैं, तेरहवीं शताब्दी की, जिसमें हम सब चल रहे हैं। (**सदर्प**) प्रतापसिंह ! यह सम्राट पृथ्वीराज की परिषद् है, भीमदेव की नहीं।

प्रतापसिंह : (**खड़े होकर**) ज्ञात है काका कान्हदेव ! साथ ही यह भी नहीं भूले हैं कि सम्राट ने हमें शरण दी है। दुर्भाग्य की एक रेखा हमारे भाग्य में उस समय खींच दी गई जिस समय भीमदेव सिंहासन पर बैठ गये और दूसरी उस समय जब हमने अजयमेरु में शरण ली। अन्यथा सिंहासन तो शक्ति-सम्पन्नों के लिये है। भाग्य ने भीमदेव को सिंहासन पर बिठा दिया।

[**प्रतापसिंह दीर्घ निश्वास लेकर बैठते हैं**]

चन्द : (**खड़े होते हुए**) प्रतापसिंह, मालूम होता है चौहान-परिषद् का वैभव देखकर आँखें चौंधिया गई हैं।

[**बैठते हैं**]

अमरसिंह : (**उठकर**) कविराज, बड़े भाई स्वभाव से उग्र हैं। परिस्थितियाँ भी हमारे प्रतिकूल हैं। हमारी धमनियों में भी चालुक्य सारंगदेव का शुद्ध रक्त प्रवाहित हो रहा है। उसमें अब भी उष्णता है, किन्तु इस समय हम आपके आश्रित हैं। हमारी विव-

शतायें हमसे आँख-मिचौनी कर रही हैं।

[बैठते हैं]

रामदास : यह क्या चर्चा छिड़ गई ! चालुक्य-बन्धुओं को हम शरण दे चुके हैं। शरणागत के साथ उचित व्यवहार किया जाना चाहिये।

पृथ्वीराज : गुरुदेव, हमने राज्य-आश्रय ही नहीं दिया है, वे हमारे अतिथि हैं। परिषद् में एक दूसरे वंश पर, शान्ति के समय सौहार्दपूर्ण व्यवहार होना चाहिये। आरोप-प्रत्यारोपों से वैमनस्य बढ़ता है। **(प्रतापसिंह के प्रति)** चालुक्यकुमार, आप हमारे मित्र हैं। अवसर देखकर प्रसंग छेड़ना उचित कहा गया है। वीरता-प्रदर्शन के अनेक अवसर आयेंगे। हम आपको अवश्य अवसर देंगे, किन्तु आपकी शक्ति का प्रयोग केवल बाहरी शत्रु के लिये होगा। आन्तरिक संघर्षों के अवसर पर आपका परामर्श अवश्य लिया जायगा। आठ नहीं, चौहानों के साथ आप आठ सहस्र योद्धाओं की शक्ति रख सकेंगे।

[प्रतापसिंह सदर्प अपनी मूछों में बल दे देते हैं। कान्हदेव उसे देख लेते हैं, और मन मारकर रह जाते हैं।]

अमरसिंह : **(उठकर)** सम्राट, हमें शक्ति-प्रदर्शन का अवसर मिलना चाहिये।

[बैठते हैं]

पृथ्वीराज : अवश्य मिलेगा। आप हमारे मित्र हैं। अमरसिंह, मित्र ही आवश्यक कार्यों की पूर्ति के साधन बनते हैं।

प्रतापसिंह : **(खड़े होकर, सविनय)** शाकंभरीश्वर के विचार अनुकरणीय हैं। मुझे कहने दिया जाय कि मित्रता का लक्ष्य आत्म-भावना की वृद्धि होना चाहिये। एकपक्षीय मैत्री स्थाई नहीं

होती। जीवन के उत्कर्ष में मित्र मित्र हो तो मित्र के अपकर्ष में भी मित्र मित्र-धर्म का पालन करे।

मदास : सुन्दर भावना है राजकुमार ! ऐसी भावनाएँ मनुष्य को उन्नति के शिखर पर पहुँचा देती हैं, चाहे उनसे बाधा भले ही खड़ी हो जाय। जब हृदय निर्मल होंगे तो बाधाएँ स्वयं हट जायँगी।

थ्वीराज : मित्रवर प्रतापसिंह, हम फिर वचन देते हैं। जब आप यहाँ पधारे थे उस समय भी हमने वचन दिया था——सुख में, दुःख में, हानि में, लाभ में, प्रत्येक स्थिति में हम एक दूसरे के साथ होंगे। अब तक हम आप के जीवन के सुखद क्षणों में ही भागी-दार बने रहे हैं।

प्रतापसिंह : (**खड़े होकर**) चौहान-सम्राट, हम अनुग्रह स्वीकार करते हैं। साथ ही हम भी वचनबद्ध होते है, हम आठों भाई चौहान-शिरोमणि के संकट में अपने रक्त की अन्तिम बूँद तक बहा देंगे।

पृथ्वीराज : विश्वास करते हैं राजकुमार, आप लोग हमारे अनुज हरिराज के समान ही हैं। आर्य्यवर्त्त में जहाँ इच्छा हो आप भ्रमण कर सकेंगे। आपकी गतिविधियों पर हमारे गुप्तचर बाधा नहीं देंगे। हम आपसे प्रत्येक सम्भव सहयोग लेते रहेंगे। आर्य्य-भूमि पर विदेशी संकट की आशंका कर रहे हैं, हम लोग। (**कैमास के प्रति**) अमात्यराज, इन राजकुमारों की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति का दायित्व राज-कोष पर होगा। इसके अतिरिक्त चालुक्य-सीमा-प्रदेश के समीप वाली भूमि, जिसे हमारे स्वर्गीय पिताजी ने जीता था, ग्रामों की आयसहित चालुक्य-कुमारों की सेवावृत्ति का पुरस्कार है।

प्रतापसिंह : उपकृत किया है श्रीमान् ने।

कान्हदेव : सम्राट, वह सीमा-प्रदेश··· ।

पृथ्वीराज : काका जी, हमारे संरक्षण में उस भू-खण्ड पर चालुक्य-कुमारों का आधिपत्य रहेगा। उस प्रदेश के जन-जीवन से चालुक्य-कुमार सुपरिचित हैं।

चामुण्डराय : (**खड़े होकर**) सम्राट, एक बार फिर विचार कर लें।

[**बैठते हैं**]

पृथ्वीराज : सेनापति, मित्र का विश्वास न करेंगे तब किसका किया जायगा ? राजकुमार चौहानों के मित्र हैं। वे मित्र-धर्म का निर्वाह कर सकेंगे। व्यवस्था हो कैमास !

कैमास : (**उठकर**) आज्ञा देव ! शीघ्र ही आवश्यक व्यवस्था की जायगी।

[**प्रतिहारी का प्रवेश**]

प्रतिहारी : (**नतमस्तक**) आर्य्य-सम्राट की जय हो। परमारदेव श्री जयतसिंह के राज-पुरोहित पधारे हैं।

रामदास : परमार जगतसिंह के राजगुरु !

पृथ्वीराज : उन्हें सम्मान-पूर्वक ले आओ।

[**नतमस्तक प्रतिहारी का प्रस्थान**]

कैमास : सुना है जयतसिंह परमार ने गुर्ज्जरेश्वर भीमदेव से संघर्ष मोल लिया है।

[**बैठते हैं**]

चन्द : (**खड़े होकर**) परमार शक्तिशाली हैं, फिर भी चालुक्य-नरेश से शक्ति में पूरे नहीं उतर सकते।

पृथ्वीराज : इस संघर्ष का कारण क्या होगा ? मित्रवर प्रतापसिंह आप कुछ बता सकेंगे ?

प्रतापसिंह : (**खड़े होकर**) श्रीमान्, भीमदेव अपनी गाँठ की बुद्धि तो

रखते नहीं। जयसिंह उनका मुँहलगा मन्त्री है, स्वार्थसाधना में रत। युद्ध के दिनों में उसकी बन आती है। राजकोष से धन युद्ध के नाम पर दिया जाता है, किन्तु उसका अधिकांश उसके घर में पहुँच जाता है। सम्भव है उसी ने भीमदेव पर पानी चढ़ा दिया होगा !

पृथ्वीराज : और परमार का सैनिक-बल ! उसके सम्बन्ध मे भी कुछ जानकारी होगी ?

प्रतापसिंह : जयतसिंह शक्तिसम्पन्न है, उनकी सेवा में भीलकाठी पर्याप्त मात्रा मे है। शत्रु से जी-तोड़ लड़ने वाले है। पीठ दिखाना उन लोगों ने नही सीखा। युवराज सलख खड्‌ग चलाने में प्रवीण है। किन्तु यह तो स्वीकार करना ही होगा कि चालुक्य-शक्ति के सम्मुख उनकी सैनिक-शक्ति बहुत ही कम है।

[**बैठते है**]

[**प्रतिहारी के साथ परमार-राजगुरु का प्रवेश। साथ मे कुछ व्यक्ति और है जिनके हाथों मे स्वर्ण-पात्र है जिन पर वस्त्र ढके हुए है।**]

कैमास : (**उठते हुए**) पधारिये ! परमारनरेश सानन्द है ?

राजगुरु : कैलाशपति का आशीर्वाद है। सपादलक्ष-सम्राट की जय हो। परमार-नरेश ने अपनी सुकन्या इच्छनकुमारी का लग्न लेकर भेजा है।

कान्हदेव : शुभ हो ! राजगुरु रामदास का आशीर्वाद प्राप्त करो चौहानराज !

रामदास : वत्स पृथ्वीराज, राजलक्ष्मी का स्वागत करो। इस सम्बन्ध से हम सहमत है।

चन्द : राजलक्ष्मी अनुपम-सुन्दरी, सर्वगुण की खान हैं।

[राजगुरु स्वर्ण तथा मणियों से जड़ा हुआ, श्रीफल वाला स्वर्णपात्र सम्राट की ओर बढ़ाते हैं। चौहान-राजगुरु रामदास खड़े होकर मंत्र-उच्चारण करते हैं। मंत्र समाप्त होने पर पृथ्वीराज श्रीफल का स्पर्श करते हैं। तदनन्तर रामदास उसे लेकर सिंहासन के समीप रखते हैं। परिषद्-भवन में हर्षोल्लास होने लगता है। सम्राट पृथ्वीराज तथा आर्य्यवर्त्त की जय-ध्वनि भवन में गूँजने लगती है। उसके पश्चात्—]

पृथ्वीराज : अमात्यराज ! राजगुरु तथा आगन्तुक समुदाय की निवास-व्यवस्था तथा पुरस्कार आदि समुचित हो।

कैमास : आज्ञा देव ! कोई त्रुटि न हो पायगी।

[परमार-राजगुरु अपने साथियों के साथ प्रस्थान करना चाहते हैं, उसी समय सवेग प्रतिहारी का प्रवेश]

प्रतिहारी : सम्राट की जय हो ! परमार देव के राजदूत पधारे हैं।

राजगुरु : **(साश्चर्य रुकते हुए)** भीनमाल से राजदूत पधारे हैं !

कैमास : **(पृथ्वीराज की ओर देखते हुए)** राजदूत के आने का कारण रहस्यपूर्ण है।

रामदास : फिर भी सुनना तो होगा। लग्न-प्रस्ताव के साथ ही राजदूत ! अवश्य कोई विशेष बात है।

कैमास : आज्ञा है। प्रतिहारी, शीघ्र लिवा लाओ। परमार-राजगुरु, आप भी विराजिये।

राजदूत : सम्राट की जय हो ! परमार-नरेश ने विनम्र निवेदन किया है श्रीमान् की सेवा में !

पृथ्वीराज : हम सुनना चाहेंगे, कहिए !

राजदूत : **(सविनय)** चालुक्यराज भीमदेव ने जयतसिंह परमारदेव के

पास रण-निमन्त्रण भेजा है।

पृथ्वीराज : रण-निमन्त्रण सुना तो हमने भी था। परमारराज ने स्वीकार कर लिया होगा ?

राजदूत : (**सविनय**) प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया है श्रीदेव ! हमें क्या करना है ? यदि हमसे सहायता माँगी गई है तो पहले हम संग्राम से पूर्व इस युद्ध का कारण जानना चाहेंगे।

राजदूत . (**सविनय**) कारण स्पष्ट है, इधर राजगुरु लग्न लेकर पधारे, उधर चालुक्य-अमात्य परमार-नरेश के समीप पहुँचे और इच्छन-कुमारी के साथ विवाह-प्रस्ताव रख दिया।

रामदास : इच्छनकुमारी के साथ विवाह का प्रस्ताव !

कान्हदेव : जिसे परमारराज ने ठुकरा दिया क्या ?

राजदूत : हाँ श्रीमान् ! यह सत्य है। सत्य कड़वी औषधि है।

कान्हदेव : चौहान उसका उपचार जानते हैं। कहिए परमारराज ने यह सघर्ष क्यों मोल लिया ? बड़ी पुत्री सम्भवतः चालुक्यराज को ही ब्याही गई है ?

राजदूत : हाँ, श्रीमान् ! किन्तु देव, इच्छनकुमारी ने चौहान-कुल-दीपक, आर्य्यमार्तण्ड, आर्य-सम्राट का मन-वचन से वरण करने का संकल्प ले लिया था। परमारदेव तो इससे पूर्व ही निश्चय कर चुके थे।

रामदास : विवाह-प्रस्ताव के साथ युद्ध-प्रस्ताव भी मिल गया। होनी बलवान है।

कान्हदेव : क्षत्रियों के लिए कोई नवीनता नही है। गुरुदेव, युद्ध-विवाह होते ही हे। हमे स्वागत करना चाहिए।

चन्द : (**खड़े होकर**) राजदूत ! सम्राट लग्नप्रस्ताव स्वीकर कर चुके हे। अतः अब युद्ध में सहयोग देना भी आवश्यक हो गया है।

चालुक्यराज को छटी का दूध याद आ जायेगा। कन्या का वाग्दान होने पर उसे लौटा लेना क्षत्रियों के लिये कलंक है।

पृथ्वीराज : हम नहीं चाहते थे कि हम अभी अपने लोगों से ही युद्ध में उलझें, किन्तु जब सिर पर आ पड़ा है तो उससे पीछे हटना असम्भव है। परमारदेव की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। जो जो राष्ट्र अथवा नरेश हमसे सहयोग की कामना करेंगे हम उन्हें सहयोग देंगे।

प्रतापसिंह : (**खड़े होकर**) सम्राट, हमारा अहोभाग्य है, हमें कर्त्तव्य पर मर मिटने का अवसर मिल गया है। चालुक्यराज को अपनी करनी का फल भोगना होगा, हम विजयी होंगे।

[**बैठते हैं**]

पृथ्वीराज : मित्रवर, हमने पहिले ही स्पष्ट कर दिया था। हम आपकी शक्ति आपसी संघर्षों में न गँवायेंगे। आपका पराक्रम बाहरी संकट के काम आयेगा। चौहान-सैनिक ही चालुक्यराज का दर्प चूर्ण कर सकते हैं, किन्तु···हम स्वयं चालुक्यराज से साक्षात् कर सकेंगे।

प्रतापसिंह : जैसी श्रीमान् की आज्ञा !

पृथ्वीराज : (**राजदूत के प्रति**) राजदूत, परमारदेव श्री जयतसिंह से निवेदन करें कि पृथ्वीराज युद्ध का संचालन स्वयं करेंगे। आप निस्संकोच पधारें। हम कविराज चन्द को भीमदेव के पास भेजना उचित समझते हैं। यदि वह संघर्ष टालने के लिये तैयार हो गये तो ठीक है, अन्यथा हम अपनी सेनाएँ चालुक्य-सीमा में ही पहुँचा देंगे। भीमदेव को अवसर ही नहीं मिलेगा कि वे परमारराज पर आक्रमण कर सकें।

राजदूत : अनुगृहीत हैं श्रीमान् ! तो हमें विदा दीजिये। हम तुरन्त

परमारदेव की सेवा में चौहान-सम्राट का निर्णय पहुँचा देना उचित समझते हैं।

पृथ्वीराज : पधारिये राजदूत, हम अपनी तैयारी में लगते हैं। आप भी यथाशक्ति सावधान रहें।

राजदूत : आदेश का पालन होगा, श्रीमान् !

[**नतमस्तक राजदूत तथा राजगुरु आदि का प्रस्थान**]

राजगुरु : वत्स, हमें तुम्हारा मंत्र उचित लगा। हो सके तो भीमदेव को समझाकर युद्ध की घड़ी टाल देनी चाहिये।

पृथ्वीराज : अवश्य प्रयत्नशील रहेंगे। गुरुदेव, आज्ञा हो तो परिषद् का कार्य स्थगित किया जाय। हमें दूसरी योजनाओं में सलंग्न होना है।

रामदास : अवश्य ! अवश्य ! चलिये।

[**सब उठ खड़े होते हैं**]

[**यवनिका-पतन**]

दृश्य : पाँच

स्थान : पाटनाधिपति महाराजाधिराज गुर्जरेश्वर श्री भीमदेव का परिषद्-भवन।

समय : मध्याह्नोपरान्त।

[परिषद्-भवन सुसज्जित है। भवन के निर्माण में प्रायः काठ तथा स्वर्ण का उपयोग दिखाई देता है। कहीं-कहीं मणियों का प्रयोग किया गया है। काठ की भित्तियों पर कहीं शिव तो कहीं जैन तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ खुदी हुई हैं। कुछ स्तम्भों पर स्वर्ण-कलश तथा उन पर श्वेत पताकाएँ दिखाई दे रही हैं। प्रतीत होता है यह योग सम्राट

गुर्ज्जरेश्वर का जैन-मतावलम्बी अनुराग है। समस्त भवन सुवासित गन्ध से पूर्ण है।

सिंहासन के दाईं ओर मंगला प्रकोष्ठ है। वहाँ से सुमधुर कोकिल-कण्ठी स्वर-लहरियाँ मन्द मन्द स्वरों में उठ रही हैं। परिषद्-जन तथा निमंत्रित दर्शक-गण अपने-अपने स्थान पर बैठते हैं। थोड़े ही समय में स्वर्ण-सिंहासन के अतिरिक्त सभी स्थान, दो एक को छोड़कर, भरे हुए दिखाई देते हैं। सहसा नेपथ्य में शंख-ध्वनि होती है। उपस्थित समुदाय सतर्क हो उठता है। शंख-ध्वनि के पश्चात् सुनाई पड़ता है···]

ध्वनि : सावधान! परम भट्टारक, महाराजाधिराज, चक्रवर्ती, परमेश्वर, महामण्डलेश्वर, चालुक्य-कुल-भूषण, परमदेव श्रीमान् भीमदेव द्वितीय पधारते है, सावधान ! सावधान !!

[पुनः शंख-ध्वनि होती है। सुनकर उपस्थित समुदाय स्वागत करने के लिये उठकर खड़ा होता है। मन्थर गति से चौलुक्यराज प्रवेश करते हुए सिंहासन पर जा विराजते हैं। चमर-धारिणी यौवनाएँ चमर डुलाने लगती हैं। मंगला-प्रकोष्ठ से स्वर-लहरी तीव्र होती हुई विलीन होती है। परिषद्-भवन में गम्भीरता छा जाती है।]

भीमदेव : (**एक आसन की ओर देखकर**) काका सारंगदेव नहीं पधारे। उनका स्वास्थ्य कैसा है ? अमात्यराज अमरसिंह, पता लगवाया जाय।

अमरसिंह : (**खड़े होकर, सविनय**) देव, अभय मिले ! काका साहब का स्वास्थ्य कुछ विपरीत चल रहा है ! उस दिन की घटना से उनके हृदय पर विशेष प्रभाव पड़ा है।

भीमदेव : (**गम्भीरता पूर्वक**) काका जी का अस्वस्थ होना ठीक नहीं

रहा। जयसिंह, उसका उत्तरदायित्व तुम पर होगा! यदि भीमदेव की परिषद् से सारंगदेव चले गये तो हम कलंकित हो जायेंगे। हमारी परिषद् सूनी हो जायगी।

जयसिंह : अपराध क्षमा हो देव! सेवक ने जो कुछ कहा था पाटन के हित के लिए ही कहा था।

भीमदेव : (**गंभीरता पूर्वक**) पाटन का हित हम भी देखना जानते हैं। काका जी ने पाटन की कीर्ति स्थापित करने में कुछ उठा नहीं रखा है, जयसिंह! हमारे कानों मे तुम हमेशा विष घोलते रहे हो। हमने तुम पर विश्वास किया, हमने तुम्हारी सलाह मानी, हमने भाइयों पर अत्याचार किया! क्यों जयसिह, जानते हो क्यों?

जयसिंह : अन्नदाता!

भीमदेव : अमरसिंह! जयसिंह ने भयानक कार्य किये है।

जयसिंह : (**उठकर**) अपराध क्षमा हो श्रीमान्!

भीमदेव : पाटन में जो षड्यन्त्र चला उसमें प्रतापसिंह आदि का अपराध प्रमाणित कहाँ हुआ था, फिर भी हमने जयसिंह के कहने में आकर उन्हें गुर्जर-सीमा से बाहर कर दिया। प्रतिकार की भावना मनुष्य में आ जाना स्वाभाविक ही है। किन्तु यदि हम कान के कच्चे न होते तो हमारे भाई चौहानों का आश्रय न लेते। रोग से पीड़ित आत्मा कष्ट से---कड़वी औषधि से नीरोग होगी। यह मंत्र हमें काका जी ने दिया। कितना सत्य छिपा है इस कथन में! उस रात्रि हम सारंग-भवन गए थे। काका सारंग देव रोग-शैया पर पड़े थे। उन्होंने कहा था---अपराधी को दण्ड देकर अपराध मिटा सकना सम्भव नहीं है। अपराधी का हृदय-परिवर्त्तन हो जाय तभी समाज के कीटाणु दूर हो सकेंगे। हमारी आत्मा ने मन्थन किया है। हमने धारणा बना ली है कि अपराधी

प्रतापसिंह नहीं, हम थे—हमारे सलाहकार थे। **(सरोष)** जयसिंह !

जयसिंह : **(सविनय)** पाटनधनी ! अपराध क्षमा हो।

भीमदेव : काका जी के सिद्धान्त स्वस्थ है, उनके कथन में हमें सत्य के दर्शन हुए है—**(भावावेश)** सत्य के दर्शन···दण्ड शरीर को मिटा सकता है···भावना···भावना को नहीं। जयसिंह ! प्रेम और सहिष्णुता···प्रेम और सहिष्णुता ! **(सरोष)** जयसिंह, अब तुम्हीं हमारे भाइयों को लौटाकर ला सकते हो·· केवल तुम्हें अजयमेरु जाना होगा। हमारी भुजाएं टूट गई हैं जयसिंह, उन्हें शक्ति चाहिए। और वह शक्ति प्रतापसिंह के आने पर, काका सारंगदेव के ठीक होने पर ही प्राप्त हो सकती है।

जयसिंह : **(सव्यथा)** अन्नदाता, जाऊँगा। अपने किये पर पछता रहा हूँ। यदि राजकुमारों को सम्राट के समीप न ला सका तो···तो **(भावावेश)** जयसिंह चिता में अपना जीवन भस्म कर देगा।

[**प्रस्थान करना चाहता है।**]

भीमदेव : **(सदर्प)** ठहरो जयसिंह ! चौहान-परिषद् में जा रहे हो, प्रतापसिंह को अथवा हमारे शत्रु चौहानों को यह अनुभव न हो कि हम युद्ध की आशंका से उन्हें वापस ले जाना चाहते हैं।

वीरधवल : **(खड़े होकर)** गुर्ज्जरेश्वर उचित ही कह रहे हैं, किन्तु यह कार्य समयानुकूल नहीं है। इससे गुर्ज्जरमण्डल की शक्ति पर लांछन लग सकता है श्रीमान् ! गुर्ज्जरशक्ति के प्रति आशंका की जा सकती है।

भीमदेव : बाघेला-शिरोमणि ! इसके लिए हमने जयसिंह को सावधान कर दिया है।

अमरसिंह : (**खड़े होकर**) अभय मिले तो कुछ निवेदन करूँ गुर्ज्जरे-श्वर !

भीमदेव : (**सदर्प**) कहो अमात्यशिरोमणि ! तुम भी कह डालो !

अमरसिंह : प्रतापसिंह अमात्य जयसिंह पर सन्देह करते आये हैं। उनके कथन पर विश्वास न करेंगे।

भीमदेव : हो सकता है अमात्यराज ! हमने राजकुमारों के लिये अभय-पत्र लिख दिया है। लीजिये इस पर राज-मुद्रा अंकित कर दें।

[**अमरसिंह अभय-पत्र लेकर मुद्रा छापते हैं।**]

जयसिंह : मैं किसी न किसी प्रकार उन्हें लेकर ही आऊँगा।

[**प्रतिहारी का प्रवेश**]

प्रतिहारी : (**नतमस्तक**) गुर्ज्जरेश्वर की जय हो ! सपादलक्ष शाकंभरी से राजदूत आये हैं।

[**समस्त परिषद् में आश्चर्य एवं दुविधामय वाता-वरण छा जाता है**]

भीमदेव : उन्हें शीघ्र लिवा लाओ।

[**नममस्तक प्रतिहारी का प्रस्थान**]

अमरसिंह : मालूम होता है आग भड़क उठना चाहती है। परमार जयतसिंह के कारण युद्ध की विभीषिका अपने पैर फैला चुकी है।

भीमदेव : हम युद्ध से नहीं घबराते अमरसिंह, हम युद्ध से पूर्व अपने भाइयों से मिलना चाहते थे, अपनी विवशता उनके सामने प्रगट कर देना चाहते थे। हमें जीवन का मोह भी नहीं है, सम्भव है युद्ध में हम वीरगति को प्राप्त हो जायँ, एक बार हम प्रतापसिंह को बताना चाहते हैं कि हमारी आखों में भी पश्चात्ताप के आँसू आ सकते हैं। हमारा हृदय भी अपने वंश के लिए···अपने···

[प्रतिहारी के साथ राजदूत का प्रवेश। कविराज चन्द अपने साथियों सहित विचित्र वेश में प्रवेश करते हैं। सब मुँह दबाकर हँसते हैं। चन्द इधर-उधर देखते हैं।]

भीमदेव : (**सदर्प**) चौहान-परिषद् में राजदूत नट और जादूगर होते हैं।

[सब हँसते हैं]

चन्द : (**सदर्प**) गुर्जरेश्वर चौहान, हम कवि चन्द हैं। कवि सब कुछ कर सकते हैं।

भीमदेव : कवि सब कुछ कर सकते हैं। कविराज, आप नृत्य भी जानते होंगे ?

चन्द : हम नाचते भी हैं और नचाते भी हैं।

[डमरू बजाते हैं]

भीमदेव : यह सब क्या है ? राजपरिषद् की कुछ सीमायें हैं राज-दूत !

चन्द : कवि चन्द को सिखाना न पड़ेगा, गुर्जरेश्वर ! राजपरिषदों की मर्यादाएँ हम जानते हैं।

भीमदेव : हमें तो लगता है तुम इन्द्र-जाली हो !

चन्द : चौहानों का इन्द्र-जाल भयानक है श्रीमान् ! उसमें न उलझो। तभी तक गुर्जरेश्वर का कल्याण है।

भीमदेव : हमें अपने कल्याण की स्वयं चिन्ता है राजदूत ! हाँ, हम कविराज का नृत्य देखना चाहते हैं। वैसे साहित्य और काव्य में, संगीत में, विद्वत्ता में हमारे प्रधानामात्य अमरसिंह सेवरा से जीत नहीं सकते।

चन्द : अमरसिंह सेवरा का नाम हमने सुना है। वह जैन है। उससे तो हमारे ये (**अपने एक साथी की ओर संकेत करके**) कवि मित्र

जूझ सकते हैं। और रही हमारे नृत्य की बात! वह तब तक व्यर्थ है जब तक गुर्ज्जरेश्वर स्वयं नाच रहे हैं।

भीमदेव : (सरोष) राजदूत! क्या बक रहे हो? बन्द करो यह बकवास!

चन्द : यह बकवास नहीं है, पाटनराज! यह वह सचाई है जिसे आर्य्यवर्त्त के नरेश ही नहीं, यहाँ की जनता भी जानती है। क्या यह मिथ्या है कि चालुक्यराज एक लड़की के लिए नाच रहे हैं? एक इच्छनकुमारी को पाने के लिए भारतभूमि में युद्ध के बादल जब बरसेंगे तो प्रलय हो जायगी। क्षत्रिय क्षत्रिय से टकरायेंगे तो सर्वत्र हा-हाकार मच जायगा। भारत की भूमि पर शोणित की धारायें बह उठेंगी।

भीमदेव : रक्त की धारायें देखकर क्षत्रियों का उत्साह बढ़ जाता है।

चन्द : अपना सिर काटकर वीर नहीं कहा जाता, अपना घर जलाकर हवन नहीं किया जाता।

भीमदेव : चौहान हमारे शत्रु हैं, हम उन पर बिजली गिरा देना चाहते हैं।

चन्द : भूल रहे हैं पाटनधनी, भूल रहे हैं। यह बिजली आपके यहाँ ही गिर रही है। कल्पना नहीं की है उस समय की जब आन्तरिक कलह में निमग्न हो जाते हैं तब केवल अपना स्वार्थ देखते हैं, जनता का हित, उसकी समृद्धि भुला देते हैं।

भीमदेव : युद्ध-काल में ऐसा होता ही है।

चन्द : तब युद्धों को टालना ही श्रेयस्कर होता है। ऐसे युद्धों से जनता का नाश होता है, अपने स्वार्थों को केन्द्रित करना होता है, गुर्ज्जरनरेश! इच्छनकुमारी की कल्पना छोड़ दो। परमार नहीं चाहते कि इच्छन का विवाह आपके साथ हो।

इच्छन ने स्वप्न में सम्राट पृथ्वीराज का वरण किया है। भारतीय नारी मन-वचन से जिसकी हो जाती है उसे पाने में ही अपना कल्याण समझती है। गुर्जरेश्वर भूल गए हैं कि परमार ने वाग्दान दे दिया था, उसके पश्चात् ही श्रीमान् का मोर आया है। परमार की प्रतिष्ठा से मत खेलो चालुक्यराज ! ऐसी स्थिति पैदा होने पर गुज्जेरेश्वर भी ऐसा न करते।

भीमदेव : कैसा नहीं करते ?

चन्द : वाग्दान करने पर, चालुक्य की पुत्री की विवाह-इच्छा व्यक्ति-विशेष से होने पर पाटनधनी अपने वचन का पालन नहीं करते।

भीमदेव : सावधान राजदूत ! तुम राजदूत हो और राजदूत का प्राण लेना नीतिविरुद्ध है।

चन्द : सावधान हूँ, तभी तो सावधान करने आया हूँ।

भीमदेव : सावधान होते तो यह रूप बनाकर नहीं आते। देख नहीं रहे हमारे वीर जगदेव भट्ट, चौरपसिंह, वीरधवल, राणकदेव आप पर हँस रहे हैं ?

चन्द : हँसने दो श्रीमान्, हँसने दो। हँसने के बाद रोना होगा।

भीमदेव : (सरोष) कविराज चन्द !

चन्द : राजदूत कहें श्रीमान् ! कवि चन्द राजदूत के रूप में उपस्थित हैं।

भीमदेव : यही तो विवशता है, अन्यथा इस मदारी का हम सब कौतुक देखते।

चन्द : कौतुक ! अभी तक हमारा कौतुक देखना बाकी है ?

भीमदेव : अच्छा, यह बताओ राजदूत, यह नसैनी, गले में जाल, कुदाल, दीपक और वह काला त्रिशूल किस लिए धारण कर रखा है ?

अमरसिंह : आज्ञा हो तो मैं बताऊँ श्रीमान् !

चन्द : आज्ञा दीजिए पाटनपति, अमरसिंह जान चुके हैं। आपकी परिषद् में बड़े-बड़े ज्ञानी, पारखी हैं। हम भी तो सुनें।

भीमदेव : अमरसिंह ! तुम बताओगे, अच्छा बतलाओ।

अमरसिंह : शाकम्भरी मे दुष्काल पड रहा है। राजदूत ने मार्ग चलने से पूर्व उदरपूर्ति के साधन जुटा लिए हैं।

चन्द : (**हँसकर**) खूब सोचा है ज्ञानवीर अमरसिंह !

अमरसिंह : जाल इसलिए लाये हैं यह राजदूत कि यदि कहीं जलाशय मिलेगा तो उसमें जाल डालकर मछलियाँ पकड़कर पेट भर लेंगे।

[**सब मंद-मंद हँसते हैं, स्वयं भीमदेव भी**]

भीमदेव : यह नसैनी किस लिए है ?

अमरसिंह : नसैनी के सहारे पेडों की छाल और पत्ते तोड़कर खा सकेंगे, जलाशय सब जगह तो नहीं न मिल सकते ! मरुभूमि है, मरुभूमि के निवासी पेड़ की छालें और पत्ते खाने के आदी होते हैं। (**सब हँसते हैं**) सम्राट ! कहीं-कहीं पत्ते और छालें भी नहीं मिलतीं तो इस कुदाली से पेड़ों की जड़ें ही खोदकर काम निकाल लेंगे। दीपक इसलिए लाए हैं राजदूत कि दिन में जब इस प्रकार के साधन भी उपलब्ध न होंगे तो रात्रि की ठंडक में कुछ ढूंढकर ही···(**सब हँसते हैं**)

भीमदेव : और त्रिशूल ?

अमरसिंह : त्रिशूल इसलिए है सम्राट कि जब उदर भरने का कोई साधन न मिलेगा तो श्मशान में जाकर त्रिशूल गाढ़ देंगे। शिवभक्त आते-जाते कुछ न कुछ दे ही दिया करेंगे।

[**सब हँसते हैं**]

चन्द : (**उच्च ध्वनि से**) सुन लिया श्रीमान्, (**निस्तब्धता छा जाती**

है) अमरसिंह सेवरा की सूझ-बूझ को ! (**हाथ उठाकर**) अब सुनिये, परिषद् शान्त होकर सुने। गंभीरतापूर्वक श्रीमान् विचार करें। चौहान-सम्राट ने कहा है : यदि भीमदेव जल में जाकर छिप जायेंगे तो जाल डालकर बाहर निकाल लेंगे और युद्ध करेंगे। यदि आकाश में भागने का प्रयत्न करेंगे तो नसैनी से पकड़ लेंगे। यदि पाताल में घुस जायेंगे तो कुदाली से खोदकर निकाल लेंगे। यदि भीमदेव अन्धकार में छिपेंगे तो दीपक के प्रकाश से ढूंढ़ लेंगे। इन सब साधनों से प्राप्त कर चालुक्य-भीमदेव को अंकुश में करेंगे और त्रिशूल से हत्या कर देंगे।

भीमदेव : (**सरोष**) राजदूत, वाचाल मत बनो। यदि बातों से ही युद्ध जीते जाते हों तो···

चन्द : भीमदेव ! आप चौहान-शक्ति से अपरिचित नहीं हैं। हम बता देना चाहते हैं कि हमारा अथाह बल चालुक्य-सैनिकों को खेल में ही जीत लेगा। पाटनधनी, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा, घर की कलह मिटा डालो। भारत के बाहर से झंझा चला आ रहा है, उसे दोनों शक्तियाँ रोक दें, अन्यथा उस झंझा से चालुक्य भी अछूते न रहेंगे।

भीमदेव : राजदूत, हमने बहुत कुछ सुना। जाकर अपने स्वामी से कहना, चौहान ने सोते हुए साँप को छेड़ा है। चूहे ने बिल्ली का मुँह सूंघा है। गुर्जरेश्वर चतुरंगिनी सेना लेकर युद्धभूमि में उपस्थित होगा। हाँ, जयसिंह, जाइये चौहान-नरेश के सन्मुख प्रतापसिंह को लौटाने का प्रस्ताव रखिये।

चन्द : (**साश्चर्य**) प्रतापसिंह ! (**दुविधा में पड़ जाते हैं**)

भीमदेव : क्यों ? आश्चर्य किस लिये हो रहा है, कविराज ? वे हमारे भाई हैं। हमने उन्हें अभय दे दिया है। हम से भयानक भूल हो

गई थी, उसे हमने सुधार लिया है।

चन्द : (**साश्चर्य**) आपने उन्हें अभय दे दिया है श्रीमान् !

भीमदेव : अभय-पत्र लेकर स्वयं जयसिंह जा रहे थे कि आपका आगमन सुनकर रुक गये। राजदूत ! जब आप आ ही गये हों तो युद्ध-निमंत्रण स्वीकार करने का समाचार देते समय यह अभय-पत्र भी प्रतापसिंह तक पहुँचा देना।

चन्द : वे लौट नहीं सकते, श्रीमान् !

जयसिंह : तब मैं ही जाऊँगा श्रीमान् !

चन्द : युद्धकाल है जयसिंह ! राजदूत के अतिरिक्त कोई नहीं जा सकता। बन्दी बना लिये जाओगे, यदि अनधिकार प्रवेश किया तो। सकट के समय दो राज्यों में युद्ध-घोषणा हो जाने के पश्चात्—इस प्रकार के कार्य नीति-विरुद्ध हैं। फिर—प्रतापसिंह···

भीमदेव : (**सविनय**) फिर···प्रतापसिंह ! क्या कहना चाहते हो राजदूत।

चन्द : (**सदर्प**) चालुक्यराज ! प्रतापसिंह वीरगति को प्राप्त हो चुके हैं !

भीमदेव : (**साश्चर्य व्यथा**) ऐं ! वीरगति !

चन्द : (**गम्भीरतापूर्वक**) आर्य्य-सम्राट के काका कान्हदेव से उलझ गये थे।

भीमदेव : कान्हदेव से उलझ गये या···कहते क्यों नहीं कान्ह ने उनकी हत्या कर दी ?

चन्द : (**सदर्प**) आठों राजकुमारों ने काका जी से संघर्ष लिया। वे आठ थे और काका अकेले। सम्राट ने मध्यस्थता करनी चाही किन्तु प्रतापसिंह ने उन्हें रोक दिया। भवानी की शपथ हमारे

मध्य में खड़ी कर दी । एक-एक कर आठों भाई एक-दूसरे के मार्ग पर चले गये।

भीमदेव : हा, हन्त ! चालुक्य-द्रोही कान्ह ! हम तुम्हारा शिर काट कर ही रहेंगे ।

चन्द : **(गम्भीरतापूर्वक)** चालुक्यराज कान्ह अवश्य मिलेंगे, युद्ध-भूमि में। किन्तु इतना स्पष्ट कर दें कि सम्राट ने कान्ह की आँखों पर पट्टी बँधवा दी है। वह पट्टी युद्ध-भूमि में आकर खुलेगी अन्यथा केवल सोते समय ही वे उसे हटा सकते हैं। दृष्टि-लाभ से वंचित कर दिया गया है, चालुक्यधनी !

अमरसिंह : (खड़े होकर) दारुण दुःख दिया जा रहा है उन्हें। नेत्र-हीन का जीवन जीवन नहीं रहता। फिर भी आश्चर्य है कान्ह युद्ध-भूमि में पृथ्वीराज के साथ लड़ने आयेंगे !

चन्द : अमरसिंह, कान्ह ने उस दण्ड को स्वीकार कर अपनी मानवता का परिचय दिया है। उनका कथन है कि मनुष्य जन्म के साथ ही कर्मबन्धनों से घिर जाता है। सुख-दुःख, जय-पराजय, लोभ, माया-मोह से मनुष्य-देह आबद्ध रहती है। जब उस देह का अन्तिम समय उपस्थित होता है तो उस घड़ी में मुक्ति का मार्ग दृष्टिगोचर नहीं होता। कर्म के भोगों से मुक्ति दिलाने वाला, क्षत्रिय देह के लिये केवल स्वार्थ-धर्म ही है। स्वामिधर्म उसकी आज्ञा-पालन करना ही श्रेष्ठ है।

भीमदेव : (सरोष) राजदूत ! अपने स्वामी से जाकर कहना कि जाल को क्रोध-ज्वाला में भस्म कर देंगे। हमारी कृपाण नसैनी को काटकर फेंक देगी। मेरे घन की शक्ति कुदाल का चूर्ण बना देगी। दीपक की ज्योति एक झपट्टे में ही बुझ जायेगी। अंकुश मोड़ने के लिये विशेष शक्ति की आवश्यकता न पडेगी। त्रिशूल

मेरे भय से सिकुड़ जायगा। भीमदेव चालुक्य भीम पाण्डव के समान युद्ध करेगा। अपने भाइयों का प्रतिशोध चौहानों से लिया जायगा।

चन्द : हम प्रतीक्षा करेंगे। अच्छा श्रीमान्, हमें प्रस्थान करना है।

[प्रस्थानोद्यत]

भीमदेव : **(सदर्प)** प्रतापरूपी दीपशिखा दिखाने आये हैं! जानते नहीं भीमदेव की कृपाण के प्रहारों से प्रज्ज्वलित जो भयंकर ज्वाला उठेगी उसमें चौहान भस्म हो जायेंगे—जीवित नहीं रह सकते।

चन्द : **(प्रस्थान करते हुए)** हम चालुक्यों की शक्ति देखना चाहते हैं।

[चन्द तथा उनके साथियों का प्रस्थान]

भीमदेव : चौहानों की बर्बरता सुन रखी थी। आज देखनी भी पड़ी। चालुक्य कुमारों का वध—हमारे हृदय को मथ रहा है। जयसिंह, चौहानों से युद्ध करने से पूर्व हमें परमार-शक्ति का ध्वंस करना होगा। परमार-शक्ति के नष्ट हो जाने पर चौहान हतोत्साह हो जायेंगे।

राणकराव : उचित ही है पाटनराज!

भीमदेव : अमरसिंह, जयसिंह, हमें शीघ्र ही युद्ध के लिए प्रस्थान करना है। रण-दुन्दुभियों के निनाद ध्वनित हों।

अमरसिंह : **(नतमस्तक)** ऐसा ही होगा।

[प्रस्थान]

[सहसा नेपथ्य में युद्ध की तैयारी-सूचक ध्वनियाँ सुनाई देने लगती हैं। सब प्रस्थान करते हैं।]

[यवनिका]

अङ्क : दूसरा

दृश्य : एक

काल : वही पूर्ववत् विक्रम की तेरहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध ।

स्थान : गुर्ज्जरेश्वर भीमदेव का सैनिक-शिविर ।

समय : सन्ध्योपरान्त ।

[चालुक्य भीमदेव के अगणित सैनिक शिविर-भूमि में फैले हुए दृष्टि पड़ रहे हैं । शिविरों पर गुर्ज्जर-पताकाएँ उड़ रही हैं । सैनिकों का आवागमन बना हुआ है । कुछ गुर्ज्जर-सैनिक हाथों में भाले तथा धनुष लिये घूम रहे हैं । कुछ के हाथों में खुली हुई कृपाणें हैं । अन्य शिविरों से घिरा कुछ दूरी पर एक विशाल शिविर अलग दीख रहा है । उसके निर्माण तथा बाहरी सज्जा से प्रतीत होता है कि यह शिविर चालुक्यराज भीमदेव का है । उसके चारों ओर सतर्क प्रहरी अस्त्र-शस्त्रों से सज्जित भ्रमणशील हैं । शिविर के बाहर एक स्वर्ण-काष्ठ का बना लघु आसन है, जो प्रायः ऐसे अवसरों पर भीमदेव के बैठने के उपयोग में आता है । इस समय उस पर आवरण या बिछावन नहीं है । भीमदेव स्वयं भीतर हैं, सहसा वे सवेग बाहर निकलते हैं । उनकी मुख-आकृति पर उद्विग्नता छाई हुई हैं । कभी रुकते हैं तो कभी वेगपूर्वक इधर-उधर आते जाते हैं । सहसा अपने आसन के समीप आकर रुकते हैं । एक पैर उस पर रखकर—]

भीमदेव . (स्वगत) अभी तक कोई समाचार नहीं मिला । परमारों ने प्रवंचना का आश्रय लिया है । एक-एक प्रासाद—उनके एक-

एक कोना छान मारा किन्तु इच्छनकुमारी का कहीं पता नहीं, कुछ ठिकाना नहीं। (**गम्भीर मुद्रा**) हूँ--परमार--(**उच्च स्वर**) जगदेव ! जगदेव ! कहाँ हो तुम ?

[**सहसा जगदेव भट्ट तथा अन्य सैनिक-अधिकारी उपस्थित होते हैं। एक सैनिक भीतर प्रवेश करके तुरन्त आसन का बिछावन लेकर बिछाने की प्रतीक्षा में है।**]

सहसा जगदेव भट्ट तथा अन्य सैनिक-अधिकारी उपस्थित होते हैं। एक सैनिक भीतर प्रवेश करके तुरन्त आसन का बिछावन लेकर बिछाने की प्रतीक्षा में खड़ा है।]

जगदेव : (**सविनय**) इस उद्विग्नता का कारण !

[**भीमदेव अपना चरण उस आसन से हटाते हैं। सैनिक उस पर बिछावन बिछाता है।**]

भीमदेव : जगदेव ! (**सरोष**) जगदेव ! हम कुछ जानना चाहते हैं। (**भृकुटी का संकेत**) केवल जगदेव से···

[**अन्य सब प्रस्थान करते हैं।**]

जगदेव ! हमारा हृदय व्यथित हो उठा है।

[**बैठते हैं**]

जगदेव भट्ट · श्रीमान्, विजय मिल चुकी है। चित्त में स्वस्थता धारण कीजिये प्रभु !

भीमदेव : (**चलकर**) ऐसी जय से पराजय अच्छी थी। इस विजय में चालुक्य की हार छिपी है। केवल परमार-शक्ति क्षीण करने से हमारा प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

जगदेव भट्ट : परमार जयतसिंह को दंड दें श्रीमान् (**कुछ आगे बढ़ते हुये**) युवराज सलखसिंह भी बन्दी बना लिये गये हैं।

भीमदेव : परमार कहाँ है, जानते हो ?

जगदेव भट्ट : बन्दीकक्ष में, काष्ठ-पिंजर में ! श्री देव की कीर्ति बढ़ी है।

भीमदेव : **(हँसते हुए)** काष्ठ-पिंजर में ! काष्ठ-पिंजर में, किन्तु उसका हम क्या करेंगे ! हमें इच्छनकुमारी का पता न चला। पंक्षो उड़ चुका है जगदेव ! **(सरोष)** उड़ने से पूर्व––उड़ जाने देने से पूर्व हमें उसे पंख-विहीन कर देना था, राज-प्रासाद पर दृष्टि रखनी थी।

जगदेव भट्ट : किन्तु ऐसी कल्पना ही कब थी श्रीमान् ! परमार ने––

भीमदेव : परमार ने हमारे मुँह पर थप्पड़ मारा है जगदेव––वह थप्पड़ मारा है।

जगदेव भट्ट : उसकी कीर्ति नष्ट हो चुकी है, पिता-पुत्र अपने जीवन की अन्तिम घड़ियाँ गिन रहे हैं।

भीमदेव : यह विजय-कीर्ति हमारे पक्ष में रही, किन्तु मँहगी पड़ी। शान्ति भग हो गई है। जगदेव, तुम सदैव हमारे निकट रहे हो। हम तुमसे कुछ भी छिपा न सके हैं। हम इच्छन के प्रति···

जगदेव भट्ट : श्रीमान्, सेवक जानता है। हमारे कुटिल गुप्तचर इच्छन कुमारी को ढूंढ़ निकालेंगे।

भीमदेव : **(सरोष)** अब तक क्या हुआ ? जो आता है यही कहता है राजप्रासादों में नहीं है। राजमार्गों पर नहीं है। **(उच्च स्वर)** तब कहाँ गई ? धरती में समा गई या आकाश निगल गया ! जगदेव ! पता लगना ही चाहिये।

जगदेव भट्ट : श्रीमान् की व्यथा छिपी नहीं है मुझसे। पिता-पुत्रों को बुलाया जाय ! उनसे कह दिया जाय यदि जीवन चाहते हो तो···

भीमदेव : **(व्यंग)** हमें जीवन दो। इच्छन का पता बताओ। यही कहलवाना चाहते हो ? जगदेव, भीम जीवन दे सकता है, जीवन

के लिए याचना करना नहीं चाहता। उसने शक्ति से जो चाहा है, उपलब्ध किया है, शक्ति से। किन्तु जगदेव, भीम अब उन नराधमों की हत्या कर (**अपने खड्ग पर हाथ रखते हुए**) उन परमारों की हत्या करना नहीं चाहता। भीम चाहता था कि परमारों को भूखे सिंहों के पिंजरे में डाल दिया जाय, सिंह के पिंजरे में डाल दिया जाय।

जगदेव भट्ट : श्रीदेव की जय हो !

भीमदेव : जगदेव, यह जयकार क्यों ? हमारे घावों पर नमक छिड़कना चाहते हो ?

जगदेव भट्ट : अपराध क्षमा हो देव ! सेवक श्रीमान् की कीर्ति, सुख-शान्ति की कामना कर रहा है।

भीमदेव : जगदेव !

जगदेव भट्ट : उधर देखें श्रीमान्, काष्ठ-पिंजर में दोनों परमार बन्दी। हमारे सैनिक उन्हें घसीटे ला रहे हैं। उनका गौरव नष्ट हो गया है।

भीमदेव : फिर भी हमारे हृदय में मंथन हो रहा है।

जगदेव भट्ट : उस मन्थन द्वारा हृदय-सागर में से कालकूट निकलेगा, वही परमारों का विनाश करेगा।

भीमदेव : (**सरोष**) इन्हें हमारे समीप क्यों लाया जा रहा है ? हमें उनका मुँह भी नहीं देखना सुहाता।

जगदेव भट्ट : श्रीमान्, दोनों को भयानक प्रताड़ना दी जाय। इन्हें सब कुछ ज्ञात है। राजपरिवार की महिलाएँ कहाँ हैं, किसके आश्रम में हैं सब प्रगट कर देंगे। प्रताड़ना मनुष्य की कमर तोड़ देती है श्रीमान् !

[काष्ठ-पिंजर और समीप होता है]

भीमदेव : जगदेव ! सैनिकों से कहो, इन्हें, हमारी आँखों से दूर रखें।

[भीमदेव एक हाथ की अञ्जलि अपने भाल तथा पुनः नेत्रों पर ले जाते हैं]

इन्हें दूर करो !

जगदेव भट्ट : श्रीमान्, विश्वास करें, कष्ट-भय से रहस्य प्रगट हो जायगा। यदि इच्छनकुमारी दूर भी चली गई हैं तो भी हमारी शक्ति उन्हें खींच लाएगी।

[सैनिक समीप आकर ! पिंजरे को छोड़, नतमस्तक होते हुए]

सैनिक : चालुक्यराज की जय हो !

भीमदेव : (**सावेश**) चालक्यराज की जय ! चालुक्यराज की जय ! जय-जयकार करो—(**संकेत**) इन पामरों की।

सलखसिंह : (**सदर्प**) गुर्ज्जरेश्वर ! हम युद्ध हारे हैं, आत्म-सम्मान नहीं।

जयतसिंह : हमारी भुजाओं में अब भी शक्ति है।

भीमदेव : शक्ति ··· (**उच्च हास्य**) शक्ति ! देख ली है परमारों की शक्ति ! दो-चार प्रहर में ही सब कुछ जान लिया है। चालुक्य-सैनिकों की शक्ति ने परमार-शक्ति को गाजर-मूली की तरह कटते देखा है। दो प्रहर भी न ठहर सके।

सलखसिंह : वीरता-प्रदर्शन का एक पल भी महत्त्वपूर्ण होता है चालुक्यराज।

भीमदेव : हमें खेद है, हम परमारों की वीरता की प्रशस्ति नहीं कर सके। चाहते थे दो-दो हाथ होंगे, किन्तु परमार, तुम हमारे समीप भी न आये, युद्ध-भूमि में न जाने कहाँ थे।

सलखसिंह : हमें अपनी कृपाण का तेज दिखाने का अवसर ही न

दिया गया। अकल्पित झंझा के समान हमारी सेना पर आपका टिड्डीदल टूट पड़ा, हम सँभलें-सँभलें कि जैसे भी थे, जिस अवस्था में भी थे, युद्ध में टूट पड़ना पड़ा। सागर सरिता को पी गया।

भीमदेव : सागर में ही तो समाती हैं सरिताएँ। सागर की शक्ति के सम्मुख वे आत्मसमर्पण करती आ रही हैं। (**जयतसिंह के प्रति**) जयतसिंह अधिक अनुभव-सिद्ध हैं, सागर सरिताओं को निगल-कर ही सागर कहलाते हैं।

जयतसिंह : सरिताओं से ही सागर बनते हैं। सरिताओं ने अपने दान से सागर की महिमा बढ़ाई है चालुक्यराज !

भीमदेव : तब सागर को एक दान और कर देते परमारराज !

जयतसिंह : जो दान एक बार किया जा चुका है, क्षत्रिय दूसरी बार उसका दान कैसे कर सकता है ! दान में दी हुई वस्तु लौटा कैसे सकता है ! सम्भव है गुर्जरेश्वर एक हाथ से देते हैं तो दूसरे से छीन लेते हैं।

भीमदेव : जब हमें कोई देता नहीं तो छीन भी लेते हैं, यह सत्य कहा। जब हमें परमार-नरेश ने इच्छनी से भेंट करना स्वीकार नहीं किया तो छीन लेने का ही संकल्प किया गया।

सलखसिंह : और वह संकल्प अधूरा रह गया। स्वप्न सिद्ध नहीं होते श्रीमान् !

भीमदेव : सलख, तुम अभी बच्चे हो। भीमदेव बच्चों के मुँह लगना नहीं सीखे, उन्हें दुलार करना तो जानते हैं। (**सैनिकों के प्रति**) इन्हें बन्धनमुक्त कर दो।

[**सैनिक शीघ्रतापूर्वक उन्हें बन्धनमुक्त करते है**]

सलख, देखा हमारा दुलार !

सलखसिंह : सलख इसे घृणा समझता है।

भीमदेव : यही तो दोष है। इच्छनी का पता बता दो। भीनमाल में जाकर आनन्द और सुख का जीवन व्यतीत करो सलख !

सलखसिंह : सलख अपनी प्रतिष्ठा खो देगा आनन्द-गौरव के लिए ! भ्रम में है श्रीमान्, भ्रम के आवरण को नेत्रों से हटाओ चालुक्यराज, तब पहचानोगे सलख परमार किस धातु का बना है।

भीमदेव : हम चाहते थे कि तुम्हें वह कष्ट दिया जाय कि पर्वतों का हृदय भी पिघल जाय। (**सदर्प**) हमारी शक्ति का पता नहीं है तुम्हें !

सलखसिंह : शक्ति और बर्बरता दोनों में मित्रता है। शक्ति की पूजा की जा सकती है किन्तु नृशंसता से प्रतिशोध की भावना जागृत होती है।

भीमदेव : तुम यों न मानोगे।

[**गुप्तचर का प्रवेश**]

गुप्तचर : (**नतमस्तक**) गुर्ज्जरेश्वर की जय हो !

जगदेव : कुछ पता चला ?

गुप्तचर : अभय मिले श्रीमान् ! सारी पर्वत-कन्दरायें खोज डालीं, किन्तु कहीं पता नहीं लग रहा है।

भीमदेव : पता नहीं लगा ! पृथ्वी में समा गई क्या ? (**जयसिंह के प्रति**) क्यों परमारराज !

जयतसिंह : समा सकती है। क्षत्रिय-बाला जब अपना मनोवांछित कर नहीं पाती, तो धरती में समाकर भी अपने कुल की मर्यादा रखती है। स्वयंवर की परम्परायें अभी स्थिर हैं चालुक्यराज !

भीमदेव : स्वयंवर ! इच्छनकुमारी ने स्वयंवर रचा और आपने हमें निमंत्रण ही न भेजा ! सम्भव है हम ही उसके योग्य होते।

सलखसिंह : इच्छा बहन चौहान-कुल-भूषण, आर्य-सम्राट का वरण

स्वप्न में ही कर चुकी थी ।

भीमदेव : सलखसिंह, अभी हम सुन चुके हैं 'स्वप्न सिद्ध नहीं होते ।'

सलखसिंह : इस स्वप्न में कल्याण-भावना थी ।

भीमदेव : कल्याण-भावना ?

सलखसिंह : निस्सन्देह कल्याण-भावना । अपनी बहन के सुख पर कौन पानी फेरेगा । बहन मन्दोदरी की पद-प्रतिष्ठा स्थिर न रह पाती श्रीमान् !

जयतसिंह : इसके अतिरिक्त इच्छन ने शक्ति-पुंज आर्यसम्राट पृथ्वीराज का आश्रय लिया है । पृथ्वीराज इस धरती के इन्द्र हैं ।

भीमदेव : तब इच्छनकुमारी हमारे शत्रु के···

सलखसिंह : इच्छन का स्वर्ग वहीं है श्रीमान् ! अब आप अपना हठ त्यागें और अपने घर लौट जायँ ।

भीमदेव : भीमदेव यों नहीं लौटेगा । उस इन्द्र को मार कर रहेगा । इच्छन के सुख-सुहाग में राहु बनकर भीम खड़ा होगा ।

सलखसिंह : सलख उसके सौभाग्य में सहायक होगा । अपनी प्राणाहुति देकर भी भाई बहन के सुहाग की रक्षा करेगा ।

(गुप्तचर का प्रवेश)

गुप्तचर : (**नतमस्तक**) अभय मिले गुर्जरेश्वर !

भीमदेव : कहो, तुरन्त कह डालो···यही कहना चाहते हो कि इच्छनकुमारी अजयमेरु दुर्ग में पहुँच गई ! यही कहना चाहते हो ?

गुप्तचर : (**नतमस्तक**)······(**निरुत्तर**)

जयतसिंह : चालुक्यराज पाटन पधारें । इसी में कल्याण है ।

भीमदेव : (**सदर्प**) चालुक्य का कल्याण परमार की इच्छा पर आश्रित नहीं है । (**सैनिकों के प्रति**) बन्दी करो इन्हें । हमारा

शार्दूल पाटन में भूखा होगा। बहुत समय से मनुष्य का माँस नहीं मिला है उसे।

[**एक सैनिक का प्रवेश**]

सैनिक : (**नतमस्तक**) चालुक्यसम्राट की जय हो !

भीमदेव : सैनिक, क्या चाहते हो ?

सैनिक : अजयमेरु के राजदूत पधारे हैं।

भीमदेव : अजयमेरु के राजदूत ! सन्धि-प्रस्ताव भेजा होगा। सलख-सिंह, इन्द्र का सिंहासन चालुक्य-भय से हिल उठा है। सैनिक ! जाओ भेज दो। (**जगदेव भट्ट के प्रति**) जगदेव, इन्हें बन्धन में डाल दो। उसी काष्ठपिंजरे में।

[**राजदूत के रूप में कवि चन्द का सैनिक वेष में सगर्व प्रवेश। साथ में एक अन्य सैनिक है जिसके पास एक पात्र में कुछ ढका हुआ पदार्थ है।**]

चन्द : पाटनधनी, हम प्रतीक्षा कर रहे थे। (**खड्ग स्पर्श कर**) हमारी खड्गें रक्त-स्नान करने के लिये आतुर हो उठी हैं। मुहूर्त दिखाना हो तो गृहपत्रिका-प्रवीण वृहस्पति पंडित को भी लेता आया हूँ।

भीमदेव : कवि चन्द ! बड़े वाचाल हो। भट्ट-पुत्र बातें बनाना तो अच्छा जानते हैं।

चन्द : इस समय हम महाप्रतापी परमभट्टारक महाराजाधिराज, आर्य्यभास्कर, चौहान-कुल-भूषण, आर्य्य-सम्राट श्री पृथ्वीराज के राजदूत हैं; और अपने शिविर से आ रहे हैं।

भीमदेव : और इस सैनिक को वृहस्पति पंडित बना लाये। रूपक तो खूब रचते हो !

चन्द : आर्य्यवर्त्त का प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र के संकट के समय वीर सैनिक